कुरुक्षेत्र

LIBRARY
MINISTRY

जुलाई 1972 • मूल्य : 30 पैसे

ग्रामीण रोजगार योजना

आम के आम गुठली के दाम

त्रिलोकी नाथ

पचास करोड़ रुपए के परिव्यय से जो ग्रामीण रोजगार योजना 1971-72 में शुरू की गई थी वह 1972-73 में भी चल रही है और चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के शेष दो वर्षों के लिए 100 करोड़ रुपए के परिव्यय की व्यवस्था है।

1971-72 में कुल 34 करोड़ रुपए की राशि जारी की गई थी। मई, 1972 के अन्त तक प्राप्त रिपोर्टों के अनुसार 1971-72 का वास्तविक व्यय लगभग 31 करोड़ रुपए है। इससे लोगों को 6.9 करोड़ जन-दिन के बराबर रोजगार मिला।

आन्ध्रप्रदेश, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश केरल उड़ीसा और तमिलनाडु आदि राज्यों में तो अधिकतम निर्धारित लक्ष्य से भी अधिक व्यय हुआ है जबकि मैसूर, नागालैण्ड और उत्तरप्रदेश आदि राज्यों और चण्डीगढ़ (केन्द्रशासित प्रदेश) में न्यूनतम निर्धारित लक्ष्यों से अधिक व्यय हुआ है। कुछ राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों के लक्ष्यों की स्थिति पूरी तरह साफ नहीं है।

सब राज्यों में एक सी प्रगति नहीं हुई है। केवल आन्ध्रप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, केरल, पंजाब और तमिलनाडु राज्यों ने ही दी गई पूरी राशि व्यय की है। कुछ राज्यों में पिछले कुछ महीनों में ही प्रति जिला औसतन 1000 व्यक्तियों को रोजगार मिला है। पिछले दो-तीन महीनों में तो काम में काफी तेजी आई है। राज्यों को इस गति को बनाए रखने के लिए कहा गया है ताकि काम बिना किसी रुकावट के चलते रहें और उन्हें बरसात शुरू होने से पहले अधूरे कार्य पूर्ण करने के लिए भी कहा गया है। इस योजना से लोगों को रोजगार भी मिलता है और साथ ही साथ विकास भी होता है। आम के आम गुठलियों के दाम।

केरल

केरल राज्य के एर्नाकुलम जिले की कड़मकुड़ी पंचायत में अभी हाल में ही ग्रामीण रोजगार की क्रैश योजना के अन्तर्गत एक योजना पूरी की गई है। इस योजना के अन्तर्गत कुछ एकड़ भूमि में जल इकट्ठा करने के लिए बांध बनाकर उसमें धान की एक फसल और झींगा मछली पैदा की गई। बांध बनाने पर अभी तक केवल 55,000 रुपए खर्च किए गए हैं और सम्बद्ध कार्यों को पूरा करने पर 22,000 रुपए के खर्च का अनुमान है। पंचायत ने झींगा मछली के कुल उत्पादन को नीलाम करके एक साल में 30,000 रुपए प्राप्त कर लिए हैं। इस एकमात्र योजना से ही पंचायत की वार्षिक आय 10,000 रुपए से बढ़कर लगभग 40,000 रुपए हो गई है। जब बांध क्षेत्र में धान की फसल उगाई जाएगी और बांधों पर नारियल के वृक्ष लगाए जाएंगे तो आय और भी बढ़ जाएगी। ऐसा अनुमान है कि पंचायत दो वर्ष में अपनी लागत निकाल लेगी। यह योजना किसी समय भी शुरू की जा सकती थी पर इसे ग्रामीण रोजगार की क्रैश योजना के अन्तर्गत ही शुरू किया गया।

उत्तरप्रदेश

अलीगढ़ जिले में रोजगार योजना के अधीन अनेक योजक सड़कों का निर्माण हो रहा है। अभी कुछ दिन पहले अलीगढ़ के जिलाधीश ने हनुमान की चौकी से नदौना ग्राम तक नदौना मार्ग का उद्घाटन किया। इस सड़क पर कई महीने से आसपास के ग्रामीण श्रमदान कर रहे हैं। सड़क पर बहुत कुछ काम हो चुका है और अब इस पर पक्का काम शुरू होने जा रहा है। रोजगार योजना के अन्तर्गत इस सड़क के निर्माण के लिए लगभग 4 लाख रुपया स्वीकृत हो चुका है। इस सड़क के निर्माण में इस क्षेत्र की पंचायतों के सरपंच पण्डित योगेन्द्र शर्मा ने विशेष दिलचस्पी ली है।

कृषि उत्पादन की दृष्टि से यह क्षेत्र बड़ा उपजाऊ है और सब्जियों का यहां इतना उत्पादन होता है कि यहां से देश के बड़े बड़े शहरों को सब्जियां सप्लाई

[शेष आवरण पृष्ठ III पर

कुरुक्षेत्र संदेश

वर्ष 17 आषाढ़ 1894 अंक 9

इस अंक में

	पृष्ठ
हरित क्रान्ति से श्वेत क्रान्ति की ओर **प्रो० शेरसिंह**	2
उत्तराखण्ड की प्रगति **माधवानन्द देवलाल**	4
भारत में सहकारी सिंचाई : एक विश्लेषण **प्रभा राठौर**	6
उर्वरक उद्योग और कृषि **नवीनचन्द्र जोशी**	9
ज्ञान यज्ञ का शिव संकल्प **भगवानसहाय त्रिवेदी**	11
कृषक (कविता) **महेन्द्रसागर प्रचण्डिया**	12
बचत और विकास का साधन डाकघर बचत बैंक **शिवकुमार**	13
धान उत्पादन में क्रान्ति के बढ़ते चरण **कृष्णकुमार**	14
अपना रोजगार अपने हाथ **सुलेमान टाक**	17
खेतों में खलिहानों में (कविता) **तारादत्त निर्विरोध**	20
बच्चों में अच्छी आदतें डाली जाएं **अखिलेश अंजुम**	21
गेहूं का वसूली मूल्य **एम० एल० शर्मा**	22
पंजाब में खेलों का नया उत्सव **सत्यपाल "भारत भूषण"**	24
राजस्थान की पंचायत समितियों में स्वास्थ्य सेवा **कुसुम मेहता "प्रियदर्शिनी"**	26
कृषि जानकारी के संचार में कृषि पत्रिकाओं का योग **बसन्तकुमार**	27
संसद में विकास चर्चा **राधाकान्त भारती**	29
झूठ और सच (कहानी) **महेशचन्द्र जोशी**	30
कृषि विकास के लिए कृषि कर आवश्यक **जगदीशचन्द्र पन्त**	32

दूरभाष 382406

एक प्रति 30 पैसे : वार्षिक चन्दा 3.00 रुपए

स० सम्पादक : महेन्द्रपाल सिंह

उपसम्पादक : त्रिलोकी नाथ

आवरण पृष्ठ : बलराम मण्डल

ज्यों ज्यों दवा की, मर्ज बढ़ता गया

देश में 1971 में जो जनगणना हुई थी उसके आंकड़े अब हमारे सामने हैं। 1961-1971 के दशक में जनसंख्या 25 प्र० श० (अर्थात् प्रतिवर्ष 2.5 की दर से) बढ़ी। इस तरह जनसंख्या में लगभग 10.88 करोड़ की वृद्धि हुई और अब यह कुल मिलाकर 547,949,809 है। यदि हमारी आबादी इसी गति से बढ़ती रही तो यह अगले 40 वर्ष में दुगुनी हो जाएगी। उस समय हमें अपने सीमित साधनों से जनता के जीवन को सुचारू रूप से चलाना कठिन हो जाएगा, परिस्थितियां बिगड़ेंगी तथा सारा पर्यावरण दूषित हो जाएगा। इस स्थिति की कल्पनामात्र से ही रोमांच खड़े हो जाते हैं। यह एक ऐसी समस्या है जिसका समाधान हमें ढूढ़ना ही होगा।

अंग्रेजों के चले जाने के बाद जब हमारे कर्णधारों के हाथ में सत्ता आई तो देश से गरीबी, भुखमरी, बीमारी, बेरोजगारी तथा अन्य सभी दुःख दैन्यों को दूर करने की बात सोची गई। जहां एक ओर देश के सर्वांगीण विकास के लिए बड़ी बड़ी योजनाएं-परियोजनाएं रची गईं वहां दूसरी ओर जनसंख्या वृद्धि पर काबू पाने के लिए विशाल परिवार नियोजन कार्यक्रम भी चालू किया गया और इसके लिए एक बहुत बड़ी धनराशी की व्यवस्था की गई। पर ज्यों ज्यों दवा की, रोग बढ़ता ही गया। इसमें सन्देह नहीं कि विकास प्रयासों के परिणाम स्वरूप देश में धन दौलत बढ़ी है, रोजगार के अवसर बढ़े हैं और हर तरह का उत्पादन बढ़ा है पर हमारी जनता का जीवन स्तर लगभग जहां का तहां है और उसकी प्रति व्यक्ति आय भी लगभग ज्यों की त्यों है। कारण स्पष्ट है किजनसंख्या वृद्धि का दानव हमारी सारी बढ़ोतरी को निगल जाता है और हमारे सारे विकास प्रयासों पर पानी फेर देता है।

जहां तक हमारे परिवार नियोजन कार्यक्रम का सम्बन्ध है, यह वैसे तो देश के सभी भागों में फैला हुआ है। पैसा भी इस पर पानी की तरह बहाया जा रहा है। जनसंख्या के आंकड़े बोलते हैं कि परिवार नियोजन कार्यक्रम का असर केवल शहरों के शिक्षित वर्ग तक ही सीमित रहा है जबकि देश के लाखों लाख गांवों तक इसकी आवाज नहीं पहुंच पाई। यह ठीक है कि अल्पसंख्यकों में जनसंख्या वृद्धि की दर कुछ ऊंची है पर तथ्य यह हैं कि उनमें भी उन्हीं लोगों में यह दर ऊंची है जो पिछड़े हुए हैं और जिन तक परिवार नियोजन का सन्देश नहीं पहुंचा। अतः जरूरत इस बात की है कि परिवार नियोजन का अभियान गांवों और शहरों के पिछड़े वर्ग के लोगों में तेजी से चलाया जाए, कार्यक्रम में जो कमियां हैं उन्हें दूर किया जाए तथा ऐसे उपाए काम में लाए जाएं जिनसे इसका सन्देश जन सामान्य को ग्राह्य हो। तभी हम 1980-81 तक देश की जन्म दर घटा कर 25 प्रति हजार का लक्ष्य पूरा कर सकते हैं और जनसंख्या वृद्धि के इस दानव से मुक्ति पा सकते हैं। 卐

हरित क्रान्ति से श्वेत क्रान्ति की ओर

प्रो० शेरसिंह

भारत कृषि प्रधान देश है। यहां की 75 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहती है। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख समस्या खेती पर अत्यधिक निर्भरता है। इसलिए न केवल कृषि, बल्कि दुग्ध उत्पादन जैसे अन्य सहायक उद्योगों का भी तेजी से विकास किया जाना आवश्यक है। 1966-67 में अपनाई गई नई कृषि नीति के आशाजनक परिणाम सामने आने लगे हैं। खाद्यान्नों का उत्पादन 1950-51 के 5 करोड़ 49 लाख टन से बढ़कर अब 10 करोड़ 80 लाख टन हो गया है अर्थात् पिछले 20 वर्षों में लगभग खाद्यान्न का उत्पादन दुगुना हो गया है। इसी दौरान नकदी फसलों के उत्पादन में भी 75 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई है। इससे पता चलता है कि अब हम अनाज के लिए विदेशों पर निर्भर नहीं है, बल्कि हम अब बंगला देश को भी अनाज भेजने के योग्य हो गए हैं।

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था केवल कृषि उत्पादन बढ़ाने से ही नहीं सुधरती है, बल्कि इस दिशा में पशुपालन विज्ञान के विकास का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। बड़े खेद की बात है कि इतना विशाल देश तथा देश में विपुल पशु संख्या होने के बावजूद भी हमारे लोगों को दूध जैसा पौष्टिक भोजन उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। अतः हमें इस क्षेत्र में भी आत्म-निर्भर होने का प्रयास करना चाहिए।

दुग्ध उत्पादन के सरकारी आंकड़ों के अनुसार प्रति वर्ष देश में लगभग दो करोड़ 10 लाख टन दूध का उत्पादन होता है तथा प्रति व्यक्ति के हिस्से में 126 ग्राम दूध प्रति खुराक आता है, जो प्रति व्यक्ति की निर्धारित आवश्यक खुराक, विशेषकर प्रोटीन की मात्रा के अनुसार बहुत ही कम है। अनुमान लगाया गया है कि यदि हरेक व्यक्ति को प्रतिदिन 280 ग्राम के लगभग दूध मिल सके तो प्रोटीन की न्यूनतम आवश्यक मात्रा लोगों को मिल पाएगी। अतः 1972 की जनसंख्या के आधार पर दुग्ध उत्पादन 5 करोड़ टन प्रतिवर्ष तक पहुंचना चाहिए। इसलिए पशुओं की नस्लें सुधारने, चारे का प्रबन्ध करने तथा अन्य कार्यों के जरिए दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए व्यापक कार्यक्रम बनाना आवश्यक है। इसके साथ आधुनिक तकनीक का भरपूर उपयोग किया जाना चाहिए, ताकि स्वच्छ दूध पहुंचाने का काम कुशलतापूर्वक किया जा सके।

करनाल का राष्ट्रीय डेयरी अनुसन्धान संस्थान तथा बंगलौर, बम्बई और कल्याणी में इसकी तीन क्षेत्रीय शाखाएं डेयरी की आधारभूत तथा व्यावहारिक समस्याओं का अध्ययन कर रहे है। नस्लें सुधारने, अधिक दुग्ध उत्पादन के लिए पशुओं के स्वास्थ्य एवं पोषण की देखभाल, चारे की विभिन्न फसलों का उत्पादन, देशी और विदेशी दुग्ध उत्पादनों की प्रक्रिया, डेयरी संयन्त्रों की इन्जीनियरी, रासायनिक, जीवाणु और दूध व दूध से बने पदार्थों की पौष्टिकता के सम्बन्ध में विभिन्न प्रभागों में अनुसन्धान चल रहा है।

दुग्ध उत्पादन में तीन तरीकों से वृद्धि हो सकती है। आर्थिक रूप से बेकार पशुओं को योजनाबद्ध रूप से कम करके, पशुओं को उच्च स्तर का पौष्टिक आहार देकर तथा उनके स्वास्थ्य की देखभाल करके और वैज्ञानिक प्रजनन प्रक्रियाओं से पशुओं की नस्लों में सुधार करके।

दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से देशी पशुओं की हालस्टीन, जर्सी, ब्राउन स्विस और रेड डेन सांडों से नस्लें सुधारने की दिशा में पर्याप्त अनुसन्धान कार्य किया जा रहा है। इस दिशा में राष्ट्रीय डेयरी अनुसन्धान संस्थान ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इस अनुसन्धान से यह निष्कर्ष निकला है कि दोगले पशुओं से देशी पशुओं की अपेक्षा दुगुनी से चौगुनी मात्रा में अधिक दूध प्राप्त किया जा सकता है। यह भी देखा गया है कि दोगला पशु अपने जन्म के दो वर्ष बाद दूध देना आरम्भ कर देता है, जबकि देशी पशु चार वर्ष बाद दूध देने

योग्य हो पाता है। पशुओं की नस्लें केवल इसी प्रकार नहीं सुधारी जातीं, बल्कि सिन्धी, थारपारकर और हरियाणा नस्ल की गायों में कृत्रिमगर्भाधान का भी व्यापक रूप से प्रयोग किया जा रहा है और आशा की जाती है कि आगामी वर्षों में कृत्रिमगर्भाधान बहुत अधिक लोकप्रिय होगा और केवल इसी पद्धति से नस्लें सुधारी जाएंगीं।

पर्याप्त पौष्टिक तत्वों और स्वास्थ्य नियन्त्रण के अभाव में उत्तम नस्ल के पशु भी दूध नहीं दे सकते। भारत सरकार ने खेतों में चारे के सम्बन्ध में कई प्रदर्शन किए हैं। कम दामों पर उन्नत किस्म के बीज और चारे की फसलें तथा चारा उगाने के लिए धन दिया जा रहा है। कृषि अनुसन्धान तथा विस्तार कार्यक्रमों के माध्यम से इन कार्यक्रमों ने किसानों को आकर्षित किया है। उन्नत किस्म की कुछ घासें उगाई जा रही हैं। बरसीम, लुसर्न जैसी फलीदार फसलें और ज्वार व मकई, की उन्नत फसलें चारे की फसलों के रूप में उगाई जा रही हैं। किसान दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए हरे चारे के उत्पादन बढ़ाने की अनिवार्यता को भलीभांति समझ गए हैं।

साथ ही, दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए पशुओं के लिए सन्तुलित चारे की व्यवस्था करनी भी आवश्यक है। वैज्ञानिक विधि से मिश्रित चारा मिश्रण कारखानों में तैयार किया जा सकता है तथा किसानों को उचित भाव पर दिया जा सकता है। चारे के महत्व के प्रदर्शन तथा विस्तार कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रचार से किसान सन्तुलित चारे की ओर आकर्षित होने लगे हैं।

दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से भारत सरकार दूध के लिए मूल्य नियन्त्रण नीति का विकास कर रही है। इसका महत्व इस बात से और भी बढ़ गया है कि कई बार किसान को कम मांग के कारण कम दामों पर भी दूध बेचना पड़ता है, जिससे किसान स्वाभाविक रूप से हतोत्साहित होते हैं तथा दुग्ध उत्पादन के लिए उन्हें प्रोत्साहन नहीं मिल पाता। इस समस्या का समाधान करने के लिए बिक्री की सुविधाएं संगठित करने, किसानों को उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया जा रहा है। इसके साथ ही भूसे चारे का विकास, पशु चिकित्सा सहायता, पशु खरीदने के लिए ऋण और विस्तार के कार्यक्रम भी हाथ में लेने होंगे।

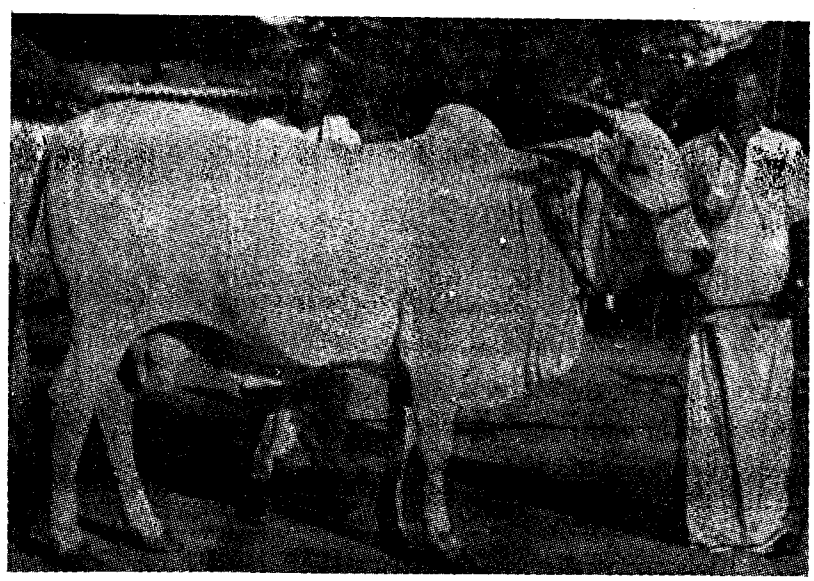

पशुपालक श्री रंगैय्या

कृष्णा जिले के गांव के साठ वर्षीय श्रीगुडलावेल्लेरु वल्लभनेणी रंगैय्या और उनके पुत्र आन्ध्र प्रदेश राज्य के पशुपालकों में अग्रणी हैं। उन्होंने 1963-64 से 1970-71 तक लगातार अखिल भारतीय दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है। इसके अलावा, भी उन्होंने अखिल भारतीय और क्षेत्रीय स्तर पर हुए पशुधन सम्बन्धी प्रदर्शनों और प्रतियोगिताओं के अनेकों इनाम जीते हैं। उनके पशुओं को कई बार सर्वश्रेष्ठ घोषित किया गया है।

श्री रंगैय्या के फार्म में ओंगोल और मिश्रित नस्ल के पशु हैं। शुद्ध और मिश्रित भैंसे भी हैं। वे अपने पशुओं का पूरा ध्यान रखते हैं और उन्हें पैरा घास, पिल्लपसेरा, सनहेम्प आदि पोषक चारा देते हैं।

अपने विस्तृत अनुभव के आधार पर श्री रंगैय्या अपने पुत्रों को तथा आसपास के अन्य पशुपालकों को समयानुसार सलाह देते रहते हैं।

श्री रंगैय्या के पुत्रों ने अब अपना फार्म खोल लिया है। श्री रंगैय्या और उनके पुत्र गुडलावैल्लेरु के दूध इकट्ठा करने के सहकारी केन्द्र को प्रतिदिन 500 लिटर दूध सप्लाई करते हैं।

पिता और पुत्रों में अपनी गायों का दूध अधिक पैदा करने के लिए स्वस्थ प्रतियोगिता चलती है। 1970-71 की अखिल भारतीय दूध उत्पादन प्रतियोगिता में इन्होंने अपनी ओंगोल गायों को भेजा था। श्री रंगैय्या की ओंगोल गाय ने 24 घन्टे में 15.133 किलोग्राम दूध देकर प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। उनके पुत्र श्री वेंकट चौधरी की गाय ने 24 घन्टे में 12.466 किलोग्राम दूध देकर तीसरा स्थान प्राप्त किया।

उत्तराखण्ड की प्रगति में तारपीन और गंधराल उद्योग का महत्व

माधवानन्द देवलाल

चीन और नेपाल से संलग्न उत्तराखण्ड का सीमान्त पर्वतीय क्षेत्र औद्योगिक प्रगति द्वारा पर्वतीय जन-जीवन को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है। कच्चे माल से सम्पन्न यह प्रखण्ड यातायात की दुर्गमता के कारण वर्षों से अंधकार में पड़े रहने के पश्चात 6 अक्तूबर 1968 के दिन से अल्मोड़ा जिले के सोमेश्वर नामक स्थान में प्रथम गंधराल और तारपीन संयन्त्र की स्थापना करके आर्थिक विकास की ओर अग्रसर है। सैकड़ों वर्षों से यहां की प्राकृतिक सम्पत्ति 'लीसा' जो या तो अछूता ही विनष्ट हो जाता था, अथवा कच्चे माल के रूप में बाहर भेज दिया जाता था, अब इस संयन्त्र के जरिए एक बहुमूल्य पदार्थ के रूप में परिणित होकर इस प्रदेश की प्रगति में चार चांद लगा रहा है।

रबड़ की तरह लीसा 3000 से 6000 फुट की ऊंचाई में हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र में उगने वाले चीड़-वृक्षों से प्राप्त किया जाता है। उत्तराखण्ड में इसका वार्षिक उत्पादन लगभग 6 लाख मन है जिसमें से 4.50 लाख मन बाहर भेज दिया जाता है। लीसा एकत्र करने में लगभग 20,000 व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त होता है।

इस उद्योग का मुख्य उद्देश्य अच्छी किस्म के तारपीन और गंधराल का उत्पादन करना है। वैज्ञानिक शोध और आधुनिक तकनीक के विकास के साथ-साथ गंधराल से तरह तरह की वस्तुएं बनाने के लिए अनेक प्रयोग किए गए हैं जिनमें रबड़ के इमल्सीफायर और संरक्षित कागज के साइज आदि शामिल हैं। यह पदार्थ नकली रबड़ बनाने के काम आता है। इस समय देश में 40 लाख रुपये के रबड़ के इमल्सीफायर का आयात किया जाता है।

गंधराल और तारपीन संयंत्र की स्थापना का मुख्य उद्देश्य पर्वतीय क्षेत्रों के ग्रामीण क्षेत्रों में इस उद्योग को संगठित करके स्थानीय लोगों को रोजगार प्रदान करना और स्थानीय उत्पादन लीसा का उपयोग करके इस क्षेत्र की आर्थिक स्थिति सुधारना है।

इस उद्योग की प्रगति को देख कर उत्तराखण्ड के 5 जिलों में आठ संयन्त्र चलाने का कार्य और हाथ में लिया गया है। इनमें से प्रत्येक संयन्त्र को खादी और ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा लगभग तीन लाख रुपए सहायता के रूप में प्रदान किए गए हैं। आशा है कि प्रत्येक संयन्त्र वर्ष में 3,200 क्विंटल लीसे का प्रशोधन करेगा। संयन्त्र चलाने के लिए अधिक-से-अधिक कार्यकर्ता तैयार करने के दृष्टिकोण से 18 अगस्त 1970 को सोमेश्वर में एक प्रशिक्षण सत्र का उद्घाटन किया गया। प्रशिक्षण प्राप्त कार्यकर्त्ता अपने-अपने क्षेत्र में इस उद्योग की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान कर रहे हैं।

चीड़ वृक्षों की पर्याप्त संख्या तथा स्थानीय लोगों की दिलचस्पी को ध्यान में रख कर सोमेश्वर संयन्त्र की सफलता को देख कर सात केन्द्रों की स्थापना की गई जिनके वार्षिक उत्पादन का मूल्य इस प्रकार रहा—रानीबाग (जिला नैनीताल) 1,78,274 रु०; जयन्ती (जिला अल्मोड़ा) 54,413 रु०; सोमेश्वर (जिला अल्मोड़ा) 1,81,200 रु०; गरुड़ (जिला अल्मोड़ा) 1,34,173 रु०; बेरीनाग (जिला पिथौरागढ़) 1,74,602 रु०; ग्वालदय (जिला चमोली) 56,989 रु०; गोपेश्वर (जिला चमोली) 2,15,910 रु०; तथा गंगोरी (जिला उत्तर काशी) 1,18,400 रु०। सभी संयन्त्रों में उत्पादन की अधिक क्षमता होते हुए भी कच्चे माल की कमी के कारण उत्पादन लक्ष्य पूरा नहीं किया जा सका। इसके लिए अभी तक पूर्ण रूप से वन विभाग पर निर्भर रहना पड़ता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हाल ही में सम्पन्न कौसानी में आयोजित लीसा उद्योग गोष्ठी में विस्तृत रूप से विचार-विमर्श किया गया। गोष्ठी में अन्य बातों के अतिरिक्त कच्चे माल के एकत्रण, चीड़ वृक्षों से अधिक मात्रा में लीसा प्राप्ति, बरबादी रोकने के लिए उपयुक्त बर्तनों का उपयोग, लीसा का वैज्ञानिक रूप से भण्डारीकरण तथा उपयोग, लीसा छनाई और आसवीकरण, गंधराल प्रशोधन, डायल थर्मामीटर द्वारा तापमान नियन्त्रण, भारतीय मानक संस्था के मानकीकरण के अनुसार उत्पादनों का स्तर-नियन्त्रण तथा तैयार माल की बिक्री पर विशेष रूप से चर्चा की गई और संयन्त्रों को चलाने के लिए आगे की पृष्ठभूमि तैयार की गई।

खादी और ग्रामोद्योग कमीशन की तकनीकी और वित्तीय सहायता से सोमेश्वर में स्थापित संयन्त्र ने स्थापना के वर्ष 1968-69 के प्रथम छः महीने की अल्पावधि में 84,000 रु० मूल्य के गंधराल और तारपीन का उत्पादन किया। प्रारम्भिक कठिनाइयों के बावजूद बाद के वर्ष में उत्पादन बढ़कर 2.50 लाख रुपये हो गया। इस संयन्त्र में स्थानीय 9 लोगों को पूर्णकालीन एवं 44 लोगों को अंशकालीन काम मिला। चीड़ के वृक्ष

उगानेवाला क्षेत्र जम्मू से उत्तराखण्ड तक 21 लाख एकड़ भूमि में फैला होने के कारण इस उद्योग के विकास की बड़ी भारी गुंजाइश है। परीक्षण से यह सिद्ध हो गया है कि इस संयन्त्र के उत्पादन भारतीय मानक संस्था के विशिष्टीकरण के अनुरूप हैं। फिर भी इस संयन्त्र को जो कच्चा माल मिलता है वह बरेली के सरकारी कारखाने को मिलने वाले कच्चे माल की अपेक्षा घटिया किस्म का है और उससे अधिक महंगा दिया जाता है। अच्छा तो यही होता कि लीसा एकत्रण का कार्य संयन्त्र चलाने वाली संस्थाओं को सौंप दिया जाता जिससे इन्हें जल्दी से उत्पादन करने में मदद मिलती।

औद्योगिक विकास के लिए पर्वतीय क्षेत्रों की स्थापना करना कठिन है। ऐसी स्थिति में लघु स्तरीय उद्योग ही सुगमतापूर्वक चलाए जा सकते हैं और स्थानीय कच्चे माल का बिखरी जनशक्ति द्वारा औद्योगिक रूप में उपयोग किया जा सकता है। यह सन्तोष की बात है कि उत्तराखण्ड का अधिकांश भू-भाग उपयोगी वनस्पतियों से सम्पन्न है जिन पर आधारित उद्योगों का संगठन करने के लिए पर्वतीय नदियों में विद्युत पैदा करने वाली अपार शक्ति भरी पड़ी है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि यहां के निवासियों को छोटे-छोटे उद्योग प्रारम्भ कर लगन से कार्य करना चाहिए जिससे उन्हें रोजगार के पर्याप्त अवसर तो प्राप्त होंगे ही, साथ ही क्षेत्र भी समृद्ध व सम्पन्न हो कर आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनेगा।

संयन्त्र चलाने का एकमात्र अवलम्बन चीड़ के वृक्षों की उपज लीसा है। इस क्षेत्र में लगभग दस लाख चीड़ के वृक्ष हैं जिसमें प्रति वर्ष लगभग 2,500 मीट्रिक टन लीसा मिल सकता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि कच्चा माल प्राप्त करने मात्र की प्रक्रिया से भी यदि अच्छी तरह से चीड़ के वृक्षों का छेदन किया गया तो हजारों छेदकों, ढोने वालों तथा अनेक विविध कार्य करने वालों को रोजगार मिल सकता है।

कच्चे माल की प्रचुरता, स्थानीय लोगों की लगन तथा खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के अन्तर्गत चल रहे सीमान्त व पर्वतीय क्षेत्रों के विकास कार्यक्रम को दृष्टि में रख कर यह आशा की जा सकती है कि इस नवगठित उद्योग से प्रदेश तथा देश की अर्थव्यवस्था में काफी सुधार आएगा। यह तभी सम्भव होगा जब प्रत्येक केन्द्र को साल भर संयन्त्र चलाने के लिए लगभग 4,000 क्विण्टल लीसे की उपलब्धि होती रहे। लेकिन वर्तमान स्थिति कुछ ऐसी है जिसे पक्षपात पूर्ण कहा जा सकता है क्योंकि पिछले साल लीसा प्राप्ति का भरसक प्रयास करने पर भी इसका वितरण इसे प्रकार किया गया कि संयन्त्र का आंशिक उपयोग ही हो सका। फिर भी यह ध्यान देने की बात है कि ये सभी संयन्त्र लाभ पर चल रहे हैं। जहां सरकार ने एक ओर इन संयन्त्रों की स्थापना के लिए उत्साहजनक कदम उठाए हैं और उत्तराखण्ड के निवासियों का जीवन स्तर उठाने के लिए कच्चे माल से सम्पन्न इस क्षेत्र में औद्योगीकरण द्वारा लघु उद्योगों में जन-जागृति पैदा की है वहां वन विभाग की लीसा वितरण की इस उपेक्षापूर्ण नीति द्वारा इन संयन्त्रों के संचालन में जो बाधा आई है उसके निराकरण के लिए यह आवश्यक है कि लीसा एकत्रण की ठेका पद्धति पर प्रतिबन्ध लगा कर इस कार्य को संयन्त्र चलाने वाले अभिकरणों को सौंपा जाए। इससे स्थानीय संयन्त्रों को कच्चे माल की कमी नहीं रहेगी, ठेकेदारों और बिचौलियों द्वारा स्थानीय जनता का शोषण नहीं होगा तथा स्थानीय कच्चे माल का अधिक-से-अधिक उपयोग सम्भव हो सकेगा। खेती योग्य भूमि की कमी की दृष्टि से पिछड़े और सामरिक महत्व के इस क्षेत्र में खादी और ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा संचालित इस उद्योग द्वारा लोगों में नए जीवन का संचार होगा और वे खुश हाल होंगे।

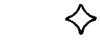

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने या पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार सम्पादक 'कुरुक्षेत्र' (हिन्दी), खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास और सहकारिता मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 1957-58 में औसतन प्रति समिति 1220 रुपये का लाभ हुआ था जो बढ़कर 1968-69 में 4९,925 रुपए हो गया। यह इस बात को सिद्ध करता है कि यद्यपि अनेक सहकारी सिचाई समितियों को घाटा हो रहा है तथापि लाभ देने वाली समितियों की संख्या भी कम नहीं है। यह सिचाई समितियों की सफलता का सूचक है। किन्तु इस सन्दर्भ में यह आवश्यक प्रतीत होता है कि ऐसी समितियों, जो हानि उठा रही हैं, की कठिनाइयों पर ध्यान दिया जाना चाहिए एवं आवश्यकतानुसार वित्तीय एवं तकनीकी सुविधाएं प्रदान कर सहायता दी जानी चाहिए।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि पिछले तीन-चार वर्षों में (1965-66 से 1968-69 तक) सहकारी समितियों का काफी विकास हुआ है। इस अवधि में समितियों की संख्या में 262 एवं सदस्य संख्या में 18,272 की वृद्धि हुई। 1965-66 से 1968-69 की अवधि में लाभ प्राप्त करने वाली संस्थाओं की संख्या में लगभग 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि हानि उठाने वाली समितियों की संख्या केवल 3 प्रतिशत ही बढ़ी। यह सहकारी सिचाई के क्षेत्र में एक शुभ लक्षण है।

अतः अगर भविष्य में हानि उठाने वाली समितियों की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया तो सहकारी सिचाई समितियों की जड़ें मजबूती से जम जाने की पूर्ण आशा है। इसके साथ ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि आने वाले वर्षों में इस आन्दोलन से करोड़ों गरीब एवं छोटे कृषकों को भी लाभ प्राप्त होगा एवं उनकी आर्थिक स्थिति सुधरेगी।

बाधाएं

यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में सहकारी सिचाई समितियों के विकास में काफी प्रगति आई है, तथापि इनके मार्ग में अनेक बाधाएं हैं। सहकारी सिचाई समितियों की सफलता में वित्त का अभाव बहुत बड़ी बाधा है। दीर्घ एवं मध्यम कालीन ऋणों की आवश्यकता होती है। किन्तु यह ऋण प्राप्त करने में सहकारी समितियों को अनेक कठिनाइयां उठानी पड़ती हैं। अतः यह आवश्यक है कि सिचाई समितियों को आवश्यक वित्तीय सहायता समय पर प्रदान की जाए।

सिचाई सुविधाओं के विकास के लिए तकनीकी ज्ञान की भी आवश्यकता होती है। किन्तु सीमित साधनों के कारण समितियों को यह ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता। अतः शासन को चाहिए कि सभी सहकारी समितियों को तकनीकी सहायता निःशुल्क प्रदान करें।

भारत में आर्थिक क्रियाएं एक लम्बे समय से निजी क्षेत्र में रही हैं। फलतः कृषकों में सामूहिक स्वामित्व की भावना का अभाव है और वे सहकारिता के स्थान पर निजी क्षेत्र को अधिक महत्व देते हैं। अतः यह आवश्यक है कि किसानों में सहकारिता के प्रति रुचि बढ़ाई जाए एवं प्राप्त होने वाले विभिन्न लाभों से अवगत कराया जाए।

स्वार्थी तत्व

अनेक स्थानों पर ऐसा देखा गया है कि समितियों में कुछ स्वार्थी व्यक्तियों का ही स्वामित्व हो गया है और इसके कारण अनेक सदस्यों को हानि उठानी पड़ती है। ऐसी स्थिति में गरीब एवं लघु कृषकों को कठिनाइयां होती हैं और वे प्राप्त होने वाले लाभों से वंचित रह जाते हैं। अतः यह आवश्यक है कि ऐसे तत्वों को समिति से हटाने के प्रयास किए जाने चाहिए।

झगड़े

अनेक सहकारी समितियों में सिचाई हेतु पानी के लिए संघर्ष होता है। कई बार तो झगड़े भी हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि प्रत्येक सदस्य समय पर, पहले अपने खेतों की सिचाई करना चाहता है। अतः यह आवश्यक है कि सदस्यों को लेन-देन की भावना से कार्य करना चाहिए तथा यह प्रयास करना चाहिए कि सभी व्यक्तियों को उनकी आवश्यकतानुसार पानी समय पर प्राप्त हो सके। इसके साथ ही सिचाई की नवीन विधियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे कम मेहनत एवं थोड़े समय में ही खेतों में पानी पहुंचाया जा सके।

अपव्यय

समिति के सदस्यों को यह जानकारी नहीं होती कि पानी की कितनी मात्रा खेत में दी जानी चाहिए। अतः कभी तो पानी की कमी के कारण और कभी पानी की अधिकता के कारण फसलों को हानि भी उठानी पड़ती है। अतः आवश्यक है कि फसलों को पानी के समुचित उपयोग की जानकारी होनी चाहिए। इसके साथ ही सिचाई की ऐसी प्रणाली उपयोग में लाई जाए जिससे अपव्यय रोका जा सके।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि नवीन कृषि नीति को अमल में लाने के लिए सिचाई सुविधाओं का विकास अत्यावश्यक है। सिचाई सुविधाओं के विकास के लिए सहकारिता ही एक ऐसा आधार है जिसे व्यावहारिक रूप देकर अधिकतम भूमि पर कम से कम समय में सिचाई सुविधाएं विकसित की जा सकती हैं।

उर्वरक उद्योग और कृषि

नवीनचन्द्र जोशी

आधुनिक युग में रासायनिक खाद बनाने का उद्योग संसार के बड़े उद्योगों में से माना गया है। द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व भारत में रासायनिक खाद का प्रयोग नहीं के बराबर था। कुछ लोहे व इस्पात की कम्पनियां जो थोड़ी मात्रा में नाइट्रोजनीय खाद बनाती थीं वह एमोनियम सल्फेट के एक उपोत्पादित वस्तु के रूप में हुआ करता था। स्वतन्त्रता के पश्चात् देश में खाद्य समस्या को दूर करने के लिए कृषि क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि हेतु कई योजनाएं बनाई गईं। रासायनिक खाद का महत्व माना गया। पंचवर्षीय योजना में तो इसे और भी अधिक महत्व दिया गया। उर्वरक के प्रयोग द्वारा कृषि क्षमता बढ़ाने को प्राथमिकता दी गई।

प्रारम्भ में यह समस्या उत्पन्न हुई कि किस प्रकार देश के कृषकों को रासायनिक खाद प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। इस कार्य के लिए कई तरीके अपनाए गए। धीरे धीरे इस खाद ने उनका विश्वास प्राप्त कर लिया। इसका सबसे बड़ा कारण यह रहा कि उन्होंने स्वयं देखा कि किस प्रकार कृषि उत्पादन अच्छे किस्म का और अधिक मात्रा में हो सकता है। हाल में देश में जो हरित क्रान्ति गेहूं के उत्पादन में हुई उसके मुख्यतः तीन कारण बताए जाते हैं जिनमें पानी, बढ़िया बीज व रासायनिक खाद हैं।

भारत में कोई 17.5 करोड़ हैक्टेयर भूमि कृषि योग्य है जिसमें से लगभग 85 प्रतिशत पर इस समय काश्त होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि कृषि के अन्तर्गत और लाई जाने वाली भूमि की क्षमता सीमित ही है। साथ ही सिंचाई व अन्य साधनों द्वारा कृषि योग्य भूमि की मात्रा बढ़ाने की सम्भावना भी अधिक नहीं है। वस्तुतः विकल्प यही रहता है कि रासायनिक खाद व अन्य साधनों द्वारा वर्तमान कृषि योग्य भूमि की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जाए।

आत्मनिर्भरता की संकल्पना देश के समस्त क्षेत्रों में लागू की जानी चाहिए। सरकार ने घोषणा की थी कि पी० एल० 480 के अन्तर्गत गेहूं का आयात मार्च, 1972 से बन्द कर दिया जाएगा। चावल का आयात भी केवल कुछ ही देशों से किया जाएगा। दिसम्बर 1971 के पाकिस्तान युद्ध से यह स्पष्ट हो गया कि देश के आर्थिक विकास के कार्य में हमें किसी भी अन्य देश पर आश्रित नहीं रहना चाहिए, चाहे वह समृद्धिशाली व तटस्थ देश ही क्यों न हो ?

उपरोक्त सन्दर्भ में भी उर्वरक का स्थान देश को स्वाधीन व उन्नत बनाने के लिए महत्वपूर्ण हो जाता है। अभी तक हम रासायनिक खाद को प्रयोग में लाने के लिए उसके आयात पर अधिक निर्भर रहे हैं। देश की उत्पादन क्षमता आवश्यकता की अपेक्षा बहुत कम रही है। यह सही है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से आज तक देश में इस ओर पर्याप्त प्रगति हुई है। सरकारी व निजी दोनों क्षेत्रों में खाद के कारखाने खोले गए व सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में उत्पादन लक्ष्य नियत किए। फिर भी विश्व की राजनैतिक स्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि खाद का उत्पादन बढ़ाया जाए और इसकी किस्म में सुधार किया जाए, जिससे आत्मनिर्भर होने में सहायता मिल सके। हमारे कृषि वैज्ञानिकों ने उत्तम प्रकार के बीजों का उत्पादन करके, विशेषकर गेहूं का उत्पादन करके, सराहनीय कार्य किया है। रासायनिक खाद के प्रयोग से उत्तम बीज द्वारा अन्य कृषि वस्तुओं के उत्पादन को बढ़ाने की भी आवश्यकता है।

1970-71 में रासायनिक खाद का आयात कम होकर केवल ४० प्रतिशत रह गया था। इस वर्ष के शुरू में भारत सरकार ने अपनी लाइसेंस की नीति में ढील देकर उर्वरक उद्योग की प्रगति के लिए बड़ा योगदान दिया है जो उपयुक्त व समयानुसार है। निजी व सार्वजनिक क्षेत्रों में खाद का उत्पादन तेजी से बढ़ेगा, ऐसी आशा की जा सकती है।

उर्वरक उद्योग की प्रगति में तीव्र गति लाने के लिए हमें निम्न मुख्य बातों पर ध्यान देना होगा :—

1. अभी तक जितने उर्वरक कारखाने (निजी व सार्वजनिक क्षेत्रों में) स्थापित हुए उन सबमें उत्पादन का कार्य शुरू करने के लिए पांच से साढ़े पांच वर्ष लगे। इस ओर कार्यकुशलता बढ़नी चाहिए जिससे इतना लम्बा समय न लगे।

2. कृषकों को मिट्टी विश्लेषण की सेवा कम समय में व नजदीक उपलब्ध कराई जाए जिससे वे रासायनिक खाद का उपयोग वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सही अनुपात में कर सकें।

3. उर्वरक की किस्म पर प्रभावशाली नियन्त्रण होना चाहिए। फर्टिलाइजर (नियन्त्रण) आदेश के अन्तर्गत राज्य सरकारों की कानूनी जिम्मेदारी होती है कि खाद उपयुक्त किस्म की हो परन्तु इस ओर उत्पादकों को भी चाहिए कि घटिया किस्म की खाद न बनाएं।

4. उत्पादन बढ़ाने के साथ रासायनिक खाद के प्रयोग को प्रोत्साहन

देना अनिवार्य हो जाता है। बीमाकार्य की तरह इसका भी प्रचार करना चाहिए। विदेशों में फुटकर विक्रय मूल्य का 20 से 25 प्रतिशत भाग विपणन लागत होता है जिसका 10 से 15 प्रतिशत प्रचार लागत का अंश होता है। भारत में यह विपणन लागत 17 से 20 प्रतिशत है जिसका केवल 1 से 2 प्रतिशत भाग प्रचार व तकनीकी सेवा में काम आता है।

5. यह सही है कि रासायनिक खाद के उत्पादन और वितरण की लागत कई कारणों से बढ़ गई है, जिसमें नेप्था की कीमत, बिजली दर, रेल भाड़ा, एक्साइज ड्यूटी व अन्यवस्तुओं के मूल्यों की वृद्धि प्रमुख है। फिर भी कृषक को उचित मूल्य पर खाद प्राप्त होना चाहिए। साथ में बैंकों द्वारा साख की उपलब्धि खाद वितरण व प्रयोग के लिए सामयिक व पर्याप्त होनी चाहिए।

6. खाद के विविध प्रकार के रसायनों का सन्तुलित मात्रा में प्रयोग होना नितान्त आवश्यक है क्योंकि सन्तुलन बिगड़ने से उत्पादन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक रासायनिक पदार्थ का अपना विशिष्ट कार्य होता है व उसे किसी विकल्प से पूरा नहीं किया जा सकता।

भिन्न भिन्न राज्यों द्वारा रासायनिक खाद के उपभोग में असन्तुलित प्रयोग का होना दिखाई देता है। प्रति हैक्टेयर 29 किलोग्राम खाद जो पंजाब में काम आती है (यह भारत में सबसे अधिक मात्रा है) उसमें 23 किलोग्राम नाइट्रोजन है। यह स्थ केरल, तमिलनाडु, को छोड़कर अन्य राज्यों में भी पाया जाता हैं। केरल में 23 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर रासायनिक खाद का प्रयोग होता है जिसमें 11 किलोग्राम नाइट्रोजन व 9 किलोग्राम पोटाश की मात्रा होती है। तमिलनाडु के 12 किलोग्राम के खाद में केवल 3 किलोग्राम पोटाश होता है। इस प्रकार सन्तुलित खाद के मामले में केरल राज्य सबसे आगे है।

इस समय हमारे देश में पोटास खाद उद्योग बहुत पिछड़ा हुआ है। हमने केवल नाइट्रोजन व फास्फेटिक पोटाश खाद में ही प्रगति की है। पोटाश आयात द्वारा प्राप्त होता है। आयात में कमी करके पोटाश के प्रयोग में भी कमी हुई है। हमें चाहिए कि सब रासायनों का प्रयोग बढ़ाएं व इस ओर और अनुसन्धान की आवश्यकता है।

एक और महत्वपूर्ण विषय यह है कि अभी तक उर्वरक उद्योग ने केवल सिंचित व निश्चित उपलब्ध पानी प्राप्त करने वाले इलाकों में ही कृषि में योगदान दिया है। सूखा खेती वाले इलाकों में उर्वरक ने अभी तक प्रवेश नहीं किया है। देश में कब, कहां, कितनी वर्षा होनी है इस बात पर निर्भर है कि उर्वरक का कब, कहां और कितना प्रयोग किया जा सकता है। चूंकि वर्षा पर निर्भर करने वाले कृषकों की संख्या अधिक है, अतः इन्हीं के निर्णय पर वर्ष में खाद के प्रयोग की मात्रा निश्चित की जा सकती है। इस प्रकार उर्वरक के उत्पादन व प्रयोग में समायोजन करना बड़ा कठिन कार्य हो जाता है। इससे उत्पादकों को हानि ही नहीं, धक्का भी पहुंचता है। पूसा इन्स्टीट्यूट, नई दिल्ली के अन्वेषण से साबित हुआ है कि सूखा खेती में रासायनिक खाद का तालमेल बिठाया जा सकता है। इस ओर प्रयास करने की आवश्यकता है। पेट्रोलियम व कैमिकल और कृषि मंत्रालयों को चाहिए कि साथ मिलकर इस विषय की जांच करें व देखें कि सारे देश में प्रतिशत उपयोग देश की उत्पादन क्षमता के साथ बढ़ सके। यह तो आशा की जा सकती है कि नई तकनीक व वृहद स्तर पर उत्पादन से मूल्य में कमी होगी। रेल विभाग वितरण की अधिक सुविधा दे सकता है व खाद्य सामग्री की तरह से ही रासायनिक खाद को लाने ले जाने में सर्वोत्तम प्राथमिकता दे सकता है। मशीनों का अभियन्त्रीकरण इस प्रकार किया जाए कि आधुनिक तकनीक का प्रयोग किया जा सके। सरकारी कम्पनी इंजीनियर्स इंडिया लिमिटेड इस ओर अच्छा कार्य कर सकती है। इस सन्दर्भ में यह भी आवश्यक है कि विदेशी मुद्रा का प्रयोग कम से कम होना चाहिए।

चौथी पंचवर्षीय योजना में यह कहा गया कि भारत में उर्वरक का प्रयोग प्रति हैक्टेयर दुनिया के औसत प्रयोग का केवल 14 प्रतिशत होता है। इस योजना में स्वदेशी तकनीक द्वारा कारखानों की स्थापना के बारे में भी ओर अधिक जोर दिया गया है। राष्ट्रीय कृषि आयोग ने हाल में अपनी अन्तरिम रिपोर्ट में कहा है कि हरित क्रान्ति को बढ़ाने के लिए रासायनिक खाद का सन्तुलित प्रयोग आवश्यक है। रिजर्व बैंक ने भी यह निर्णय लिया है कि बैंकों व खाद वितरण करनेवाली संस्थाओं के बीच समन्वय कायम करके प्रत्येक इलाके में एक 'लीड सप्लायर' चुना जाए जिसके माध्यम से पांच मील के अन्दर आनेवाले समस्त गांवों के कृषकों को खाद सम्बन्धी साख उपलब्ध कराई जा सके। व्यापारिक बैंक कृषकों की खाद आवश्यकता का अध्ययन करें तथा खाद व साख के बीच तालमेल बिठाएं।

इन सब बातों के साथ यह आवश्यक है कि हरित क्रान्ति की भावना कृषकों के मस्तिष्क में भी होनी चाहिए। जब तक वह स्वयं प्रगतिशील व परिश्रमी न होंगे, किसी भी प्रकार उर्वरक उद्योग या अन्य कृषि साधन द्वारा कृषि क्षेत्र में प्रगति नहीं हो सकती है।

ज्ञान-यज्ञ का शिव संकल्प

भगवान सहाय त्रिवेदी

"अब विसून्दनी में कोई निरक्षर न रहेगा।" यह दृढ़ संकल्प अजमेर जिले की केकडी पंचायत समिति के कोई साढ़े चार सौ की आबादी वाले विसून्दनी गांव का है, जो गांव के कच्चे पक्के मकानों की दीवारों पर लिखा हुआ है।

विसून्दनी में ज्ञान-यज्ञ का श्री गणेश लगभग 10 माह पूर्व 16 प्रौढ़ शिक्षण केन्द्रों की स्थापना के साथ हुआ था। वास्तव में इन्हें प्रौढ़ शिक्षण केन्द्र कहना भी संगत न होगा क्योंकि इनमें से 8 महिलाओं के लिए 6 पुरुषों के लिए और 2 केन्द्र केवल बालकों के लिए चलाए जाते हैं। यहां 'केवल' शब्द का प्रयोग मैं इसलिए कर रहा हूं कि अन्य केन्द्रों में भी बालक अपने माता या पिता के साथ पढ़ने आते हैं।

केन्द्रों की स्थापना से पूर्व अजमेर में संगठित प्रौढ़ शिक्षण समिति ने गांव की आबादी का विस्तृत सर्वेक्षण कराया और कुल 467 की जन संख्या में से साक्षर, शिक्षा का स्तर, निरक्षर, उनकी व्यावसायिक पृष्ठभूमि, पारिवारिक परिस्थिति आदि के बारे में शैक्षणिक-सामाजिक तथ्यों का पता लगाया गया। सर्वेक्षण के आधार पर गांव में 332 व्यक्ति निरक्षर थे, जिनमें से 318 व्यक्तियों को इन केन्द्रों में भर्ती किया गया।

प्रगति की अदम्य इच्छा

इस ज्ञान-यज्ञ में केवल निरक्षर व्यक्ति ही नहीं होता है, बल्कि गांव के सरपंच श्री वीरेन्द्र सिंह, स्कूल के अध्यापकगण तथा छात्रवृन्द भी अपनी सेवाओं के रूप में आहुति दे रहे हैं।

केकड़ी से कोई 18 मील ऊबड़-खाबड़ रास्ते से चलकर जब मैं विसून्दनी पहुंचा तो मुझे गांव के आसपास कोई असाधारणता दिखाई नहीं दी। पर यहां पास के जंगलों में अभ्रक की खानें हैं, जिससे उसकी भूगर्भीय सम्पन्नता का आभास होता है और उससे भी अधिक वहां के लोगों के अन्तर में कसमसाती आगे बढ़ने की अदम्य इच्छा है जो हर कीमत पर अपने सामूहिक संकल्प की सिद्धि के लिए प्रयत्नशील है। गांव की धरती के अन्तराल में अभ्रक के रूप में जो वैभव और सम्पत्ति छिपी है उसका लाभ अजमेर के एक ठेकेदार को भले ही मिला हो, पर वैसे गांव में अधिकांश मकान अब भी कच्चे हैं। गांव के बीच एक टेकड़ी पर बना हुआ पुराना गढ़ अपने स्वरूप से भले ही सामन्तवाद का प्रतीक हो, और हो सकता है अतीत में यह अपने आसपास बसी झोंपड़ियों-कोल्हू खपरेल के कच्चे मकानों के शोषण और उत्पीड़न का साधन भी रहा हो पर आज स्थिति बिल्कुल भिन्न है। आज यह विसून्दनी के ज्ञान-यज्ञ के ब्रह्मा का मन्दिर बन गया है। कच्चे झोंपड़ों की दीवारों पर यही संकल्प मुखरित है—"अब विसून्दनी में कोई निरक्षर न रहेगा।"

विसून्दनी के लोगों के इस संकल्प की सिद्धि का पहला आभास हाल ही हुए राज्य विधान सभा के चुनावों में मिला जब गांव के 87 प्रतिशत मतदाताओं ने अपना नाम स्वयं लिखकर अपने मत पत्र प्राप्त किए। गांव के वयस्क लोगों में केवल 3 प्रतिशत ही ऐसे थे, जिन्होंने मत पत्र की काउन्टर फाइल पर अपने अंगूठे का निशान लगाया और निश्चय ही यह अल्प प्रतिशत अन्धे, अत्यन्त वृद्ध तथा इसी प्रकार के अशक्त लोगों का रहा होगा। एक वर्ष पहले तक जहां की तीन चौथाई आबादी निरक्षर रही हो, उस गांव के लिए यह उपलब्धि वास्तव में गौरव की बात है।

विसून्दनी में शाम के सात बजे तक स्थिति शान्त रहती है। गांव के घरों की दीवारों व पोलों में लिखे जाड़ बाकी के तरीके और शिक्षा सम्बन्धी नारों के अलावा कोई विशेषता दिखाई नहीं देती। लेकिन ज्यों ही सूर्य संध्या के छुटपुटे में अपने को समेट कर जाते-जाते गांव पर

स्याही बरसा जाता है, त्यों ही गांव की गली-गली और मोहल्ले-मोहल्ले में जैसे ज्वार आ जाता है। पैट्रोमैक्स जल उठते हैं, दिन भर के काम से निपट कर पुरुष और महिलाएं इन केन्द्रों में सिमटने शुरू हो जाते हैं और आठ बजते-बजते 'बहन जी' और 'भाई साहब' नियमित कक्षाओं में अपने बुजुर्गों को शिक्षा की सीरनी बांटने लगते हैं। पुरुष भूल जाते हैं कि वे किसी के दादा, बाबा व पिता हैं—कई स्थानों पर दो-दो ही नहीं, तीन-तीन पीढ़ियां ज्ञान-यज्ञ में एक साथ आहुति लगाती हैं।

महिलाओं के प्रशिक्षण केन्द्रों पर दो केन्द्र दिन में चलते हैं और जो महिलाएं खेत पर काम करने नहीं जातीं उन्हें प्रशिक्षित करते हैं। बच्चे महिलाओं की गोद से चिपट कर सो जाते हैं तो उन्हें पास ही सुला दिया जाता है पर माताएं अपनी

कक्षा की अन्य सहेलियों से किसी भी प्रकार पीछे नहीं रहना चाहतीं। केन्द्र 5 पर जब मैं पहुंचा तो उपस्थित 14 महिलाओं में से सबसे पहले जिस पर मेरी नजर पड़ी वह अपना नाम छोटी-स्लेट पर लिख रही थी। 45 वर्षीय प्रौढ़ा से जब मैंने पूछा कि वह कब तक छोटी रहेगी, पढ़ लिखकर बड़ी क्यों नहीं बनती तो उसके झुर्रियों भरे चेहरे पर भी पढ़े-लिखे जीवन की कल्पना से चमक आ गई। उसके पास बैठी एक अन्य महिला से जब प्रधानमन्त्री और राष्ट्रपति के नाम पूछे गए तो उसका अपेक्षित सही उत्तर सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। सामाजिक ज्ञान का यह स्तर तो समाज के कथाकथित सुसंस्कृत नगरों की नियमित पाठशालाओं में पढ़ने वाले छात्र छात्राओं में भी शत प्रतिशत उपलब्ध नहीं होता।

दिनचर्या में परिवर्तन

बिसून्दनी के इस अभियान ने यहां के लोगों की दिनचर्या ही नहीं बदल दी है, बल्कि कुछ नौजवानों के जीवन का क्रम भी बदल दिया है। बीस वर्षीय छोटूलाल नायक, जो अब तक निरक्षर था और बकरियां चराया करता था अब तीसरी कक्षा में पढ़ रहा है और उसकी आकांक्षाओं की बुलन्दी अभी बहुत ऊंची हैं। कुछ लोगों ने खेती सम्बन्धी साहित्य पढ़ कर अपने खेतों की उपज बढ़ाई है तो कुछ ने, जो अभ्रक की खानों पर काम करने जाते हैं, अपने वेतन का हिसाब रखना शुरू कर दिया है।

पर क्या परिवर्तन के लिए गांववासियों का यह उत्साह स्थायी रूप ले सकेगा? क्या अध्यापकगण, जो अभी विद्यादान में रस ले रहे हैं, ग्रीष्मावकाश होते ही अपने-अपने घरों को नहीं चले जाएंगे? और क्या पंचायत समिति की ओर से आर्थिक सहायता का स्रोत शिथिल नहीं पड़ जाएगा? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जो इस अभियान की सफलता की कसौटी हो सकते हैं। सरपंच वीरेन्द्र सिंह ने कहा—"परिवर्तन की यह प्रक्रिया अपने चरम लक्ष्य तक पहुंच कर ही दम लेगी। हमने अपने प्रयत्नों में 60 प्रतिशत सफलता पा ली है। क्या शेष 40 प्रतिशत के लिए निराश हो कर बैठ जाएंगे?"

उनके इस कथन की पुष्टि शाला के प्रधानाध्यापक ने की। उन्होंने कहा—केन्द्रों का कार्यक्रम गर्मियों की छुट्टियों में भी बराबर नियमित रूप से चलेगा। जो एकाध अध्यापक कुछ दिन के लिए अपने घर जाएंगे उनका स्थान बड़ी कक्षाओं के छात्र लेने को तैयार हैं।

साधन स्रोतों के लिए पंचायत एवं पंचायत समिति के सहयोग का आश्वासन विकास अधिकारी ने दिया। पर शिक्षा विभाग के एक अधिकारी ने, जो इस प्रयोग के बहुत निकट हैं, कहा कि 'ज्ञान की इस ज्योति को अपने भरसक प्रयास से वे बुझने न देंगे। इन शिक्षित प्रौढ़ों की पठन-पाठन में रुचि बनाए रखने के लिए वे 'फोलो अप' योजना बना चुके हैं जिसके अन्तर्गत पुस्तकालय की स्थापना गांव में की जाएगी और ऐसा साहित्य इन्हें पढ़ने के लिए दिया जाएगा जो इनके दैनिक जीवन और आजीविका कमाने में उपयोगी हो।'

यदि यह सब सचमुच क्रियान्वित हो जाता है तो बिसून्दनी वास्तव में 'विश्वनन्दिनी' बनकर रहेगा।

●

कृषक

हल है जनक कृषक नन्दन का
और खुरपिया मैय्या।
चलो खेत पर भय्या॥

सूरज उगा, छिपे सब तारे,
कलरव करें पखेरु सारे,
हल-बैलों को साथ ले चला,
फसलों का रखवैय्या।
चलो खेत पर भैय्या॥

अंकुर उगे, खेत लहराए,
धरती का यौवन मुसकाए,
झूम उठे विरबों के झुरमुट,
चली मदिर महकी पुरवैय्या।
चलो खेत पर भैय्या॥

महेन्द्र सागर प्रचण्डिया

बचत और विकास का साधन डाकघर बचत बैंक

शिवकुमार

डाकघर बचत बैंक जनसाधारण की जरूरतों को खास तौर पर ध्यान में रखते हुए चालू किया गया है। इससे न सिर्फ जनता में बचत करने की आदत को बढ़ावा मिलता है, बल्कि देश की सुरक्षा और विकास के लिए भी धन उपलब्ध होता है। देश में करीब 1,11,000 डाक घर हैं और इनमें से 1,04,000 से अधिक डाकघरों में बचत बैंक का काम होता है। दूर देहातों में तो केवल डाकघर ही बैंक का काम करते हैं।

बचत बैंक की बहुत सी योजनाएं हैं जिनसे आम लोग लाभ उठा सकते हैं और देश के विकास में हाथ बंटा सकते हैं। डाकघर बचत बैंक योजना में कोई भी व्यक्ति कम से कम दो रुपया जमा करके खाता खोल सकता है। इस खाते में जितनी बार चाहें, रकम जमा कराई जा सकती है और निकाली भी जा सकती है। इस पर कोई रोक नहीं है। शर्त यही है कि खाते में कम से कम पांच रुपए हमेशा जमा रहना चाहिए।

चैक की सुविधा

बड़े डाकघरों में जिन्हें सब-पोस्ट आफिस और हैड पोस्ट आफिस कहते हैं, ऐसे खाते भी खोले जा सकते हैं जिनमें चैक से रुपया निकाला जा सके। ऐसा खाता खोलने की शर्त यह है कि अर्जी देते समय कम से कम सौ रुपए खाते में जमा होना चाहिए। चैक से रुपया निकालने की एक शर्त यह भी है कि खाते में कम से कम पचास रुपए हर समय जमा रहना चाहिए। हर महीने जमा रकम में से निकाली गई रकम घटाकर जितनी रकम बाकी बचेगी, उस पर चार फीसदी सालाना की दर से सूद भी दिया जाता है। इस तरह से साल भर में जितना सूद खातेदार को मिलेगा, वह साल खत्म होने पर मूल रकम में जोड़ दिया जाता है।

अधिक ब्याज

अगर पूरे साल खाते में कम से कम सौ रुपये रोकड़ बाकी रहे तो ब्याज की दर चार से बढ़ाकर सवा चार फी सदी सलाना कर दी जाती है। एक और तरीका है जिससे सूद की रकम सवा चार फीसदी हो सकती है। वह यह है कि खातेदार को अपने डाकघर को यह लिख कर देना होगा कि उसके खाते में जितना जमा है उसमें से कुछ सौ रुपये जिसे वह बतलाएगा—वह पूरे दो साल या तीन साल तक नहीं निकालेगा। जितने रुपये वह न निकालने का करार करता है, उतने रुपयों पर उसे साढ़े चार फी सदी सूद मिलता है।

सावधि जमा योजना

बचत बैंक की एक अन्य योजना संचयी सावधि जमा योजना है। मुख्य रूप से यह योजना उन लोगों के लिए है जो कोई छोटी मोटी रकम बचाकर जमा करना चाहते हैं। इसके लिए यह जरूरी है कि एक या पांच, दस या पन्द्रह साल तक लगातार पांच दस या 15 रुपये महीने बचाकर जमा किए जाएं। अगर किसी ने 5 साल तक 10 रुपये माहवार बराबर अपने खाते में जमा किए, तो इस तरह से उसने 600 रुपये डाकघर में जमा कराए हैं। लेकिन पांच साल के बाद वह 600 रुपये के बदले 675 रुपये ले सकता है। अगर वह 10 साल तक जमा कराना चाहे तो 1200 रुपये की जगह उसे 1530 रुपये मिलेंगे। इसी प्रकार अगर वह 10 साल तक जमा कराना चाहे तो उसे 1800 रुपये की जगह 2655 रुपये मिलेंगे। इस योजना में ब्याज की दर भी मियाद के आधार पर पौने पांच से पांच फी सदी तक दी जाती है। इसके अलावा पांच, दस और पन्द्रह वर्षीय खातों से क्रमशः एक दो या तीन साल के बाद 50 प्रतिशत धन मूल राशि में से निकाला जा सकता है।

बचत बैंक की इन योजनाओं के अधीन जो रकम ब्याज के तौर पर मिलती हैं उस पर आयकर नहीं देना पड़ता।

संचयी जमा योजना से मिलती जुलती एक और योजना है। इसमें सूद की रकम पर आयकर तो देना पड़ता है लेकिन ब्याज की दर ज्यादा होती है, यानी पौने सात फी सदी। वैसे आयकर उन्हीं से लिया जाता है जो आयकर कानून के अनुसार कर अदा करने वालों की श्रेणी में आते हैं। यह योजना भी लगातार बचत करने वालों के लिए बनाई गई है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इस योजना में सिर्फ 5 साल के लिए रकम जमा की जा सकती है।

बचत बैंक की एक अन्य योजना के अन्तर्गत 50, 100 या 150 रुपए माहवार 1, 3 या 5 साल के लिए जमा करने होते हैं। जमा की रकम पर मियाद को देखते हुए छः सात या सवा सात फी सदी तक सूद मिलता है यानी यदि रकम एक साल के लिए जमा की जाएगी तो छः फी सदी, 3 साल के लिए होने पर सात फी सदी और पांच साल तक होने पर सवा सात फी सदी सूद मिलेगा। सूद की रकम प्रतिवर्ष अदा की जाती है।

विशेष सावधानी

हिसाब किताब में कोई गड़बड़ी न हो इसके लिए डाक महकमे की तरफ से तो हर प्रकार की सावधानी बरती जाती है। फिर भी कुछ बातें ऐसी हैं जिनकी तरफ अगर लोग खुद ध्यान रखें तो यह काम और आसान हो सकता है। जब किसी सब आफिस में रुपया जमा किया जाता है तो उसके हैड आफिस से

[शेष पृष्ठ 16 पर

धान उत्पादन में क्रान्ति के बढ़ते चरण

कृष्णकुमार

यह आम धारणा है कि देश के कृषि वैज्ञानिक धान के विकास में वह कारनामे नहीं दिखा पाए जो गेहूं के विकास में हुए हैं, धान के मामले में वैज्ञानिक अभी भी अंधेरे में चक्कर काट रहे हैं। यद्यपि यह धारणा निराधार है, तथापि यह समझना भी मुश्किल नहीं कि जब वैज्ञानिक आने वाले कुछ सालों में धानी क्रान्ति की बात करते हैं तब उन पर विश्वास क्यों नहीं किया जाता। गत कुछ वर्षों में बढ़िया और घटिया, पर अधिक उपजवाली लगभग डेढ़ दर्जन किस्में भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद द्वारा धानी क्रान्ति लाने को उत्सुक किसानों को जारी की जा चुकी हैं। आशा की जाती थी कि हर किस्म परम्परागत किस्म की तुलना में दुगुनी उपज देगी और इस प्रकार इससे यही क्रान्ति धान की उपज के क्षेत्र में आएगी जो अर्बतीं सोनारा और कल्याण सोना से गेहूं की उपज के क्षेत्र में आई है, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ।

आई-आर-8, जया, पद्मा, पंकज, जगन्नाथ, आई-आर-20, जमुना, बाला, कांची, कृष्णा, सावरमती, विजय, कावेरी, रत्ना और अन्य किस्में जारी होने पर भी 1964-65 में धान की 3.90 करोड़ टन उपज में केवल 30 लाख टन की बढ़ोतरी हुई। यह देखते हुए कि विश्व के धान के क्षेत्र का लगभग आधा भारत में है, उपज में डेढ़ करोड़ टन बढ़ोतरी किसी भी दशा में असाधारण नहीं मानी जाती, पर बढ़ोतरी जितनी कि आशा की जाती थी, उसका एक भाग ही हुई।

दो दृष्टिकोण

यह अर्थशास्त्रियों का दृष्टिकोण है। उनकी राय में देश में धानी क्रान्ति हुई ही नहीं और देश में न ही ऐसी कोई प्रक्रिया चालू है। यहां अर्थशास्त्री गलती पर है। अर्थशास्त्रियों का दृष्टिकोण वैज्ञानिकों के दृष्टिकोण से भिन्न होता है। एक अर्थशास्त्री को शुरू से ही साधन, उपज, वितरण के आधार पर अपना दृष्टिकोण रखने का प्रशिक्षण मिलता है, जबकि एक वैज्ञानिक आने वाली स्थितियों की कल्पना पहले से ही कर सकता है जो एक अर्थशास्त्री नहीं कर सकता।

उदाहरण के लिए किसी भी अर्थशास्त्री ने कल्पना नहीं की थी कि सातवें दशक के अन्त तक देश में गेहूं की उपज 3 करोड़ टन से कहीं अधिक हो जाएगी लेकिन डाक्टर बोरलोग को अपने प्रथम प्रयास 1958 में ही सफल होते नजर आने लगे थे और पूसा संस्थान के भू० पू० निदेशक एम. एस. स्वामीनाथन और पंजाब कृषि विश्वविद्यालय लुधियाना के डाक्टर ए. एस. अटवाल 1963 में ही गेहूं की उपज में नई दिशाओं की बात करने लगे थे। अर्थशास्त्रियों को यह बात सच्ची होती तभी नजर आने लगी जब अनाज की मण्डियां गेहूं से भर गई।

विकास की ओर

देश में धान विकास की शुरूआत केन्द्रीय धान अनुसन्धान संस्थान, कटक ने की। संस्थान 1946 में अस्तित्व में आया। संस्थान की स्थापना से पहले धान अनुसंधान चुनाव के आधार पर होता था। कभी कभी कुछ उम्दा किस्मों को एक क्षेत्र दूसरे में ले जाया जाता था, पर ऐसा आमतौर पर नहीं होता था। उन किस्मों का चुनाव किया जाता था जो क्षेत्रीय वातावरण में अधिक उपज देती थी या फिर रोग कीट रोधी थीं। सभी किस्में धरती के कम उपजाऊपन के आधार पर तैयार की जाती थीं। उर्वरकों का प्रयोग नहीं के बराबर होता था। गोबर कम्पोस्ट की खाद ही उपज बढ़ाने के लिए काफी समझी जाती थी। देशी किस्में अच्छी समझी जाती थी क्योंकि कम उत्पादन की परिस्थितियों में उनकी उपज अधिक होती थी और उर्वरकों के प्रयोग से वे गिर जाती थीं।

कटक संस्थान ने इन नीतियों में परिवर्तन कर धान विकास में पहली बार संकरण विधि का प्रयोग किया। यह माना गया कि देशी किस्मों की उपज का स्तर बढ़ाना होगा इसके लिए धान की जापानी किस्मों का अध्ययन किया गया। 'जेपोनिका' किस्में अधिक उपज

देने वाली थीं, उनकी उपज में घट बढ़ कम होती थी, पर उनका चावल चिपचिपा होता था जिसे भारतीय पसन्द नही करते थे। 'जेपोनिका' और 'इंडिका' किस्मों में संकरण से ऐसी किस्मों के विकास के प्रयास शुरू किए गए जो उपज तो जापानी किस्मों जैसी देती हों, पर दाना उनका भारतीय किस्मों जैसा हो। लम्बे अनुसन्धानों के बाद दक्षिण भारत के तंजावूर डेल्टा क्षेत्र के लिए ए० डी० टी०-27 किस्म जारी की गई। इसके बाद कई सालों तक कोई ठोस परिणाम सामने नहीं आया। धान वैज्ञानिकों में निराशा छा गई।

जिस समय कटक संस्थान निराशा के दौर से गुजर रहा था उसी समय अन्तर्राष्ट्रीय धान अनुसन्धान संस्थान, मनीला, फिलिपीन नए नए प्रयोग कर रहा था। संस्थान को राकफेलर और फोर्ड फाउण्डेशन से धन मिला था, उसके पास बढ़िया और सुविधा सम्पन्न प्रयोगशालाएं थी और अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक भी। संस्थान का उद्देश्य धान के ऐसे पौधों का विकास करना था जो धरती से तेजी से पोषक तत्व ले सकें, उन्हें जल्दी से जल्दी दानों में परिवर्तन कर सकें। पौधा छोटा और मजबूत हो ताकि हवा और वर्षा से गिरे नहीं।

ताईचुंग नेटिव-1 मनीला संस्थान द्वारा विकसित अब पहली ऐसी किस्म थी। इस किस्म ने भारत में भी धान की उपज में बढ़ोतरी करने में सहायता की और कुछ सालों तक यह यहां के किसानों में बड़ी लोकप्रिय रही। इसके बाद आई-आर-8 आई। इसे भी हमारे किसानों ने बड़े उत्साह और चाव से अपनाया। कटक संस्थान और देश के अन्य धान केन्द्रों को मनीला संस्थान की प्रगति से प्रेरणा मिली। उन्होंने अपनी अनुसन्धान नीति में आमूल परिवर्तन किया।

समन्वित योजना

धान अनुसन्धान में देश भर में समन्वय स्थापित करने के लिए अखिल भारतीय समन्वित धान परियोजना शुरू की गई जिसका मुख्य केन्द्र राजेन्द्र नगर, हैदराबाद में है। इस समय देश में धान अनुसन्धान केन्द्रों का जाल सा बिछा है। हर अच्छा परिणाम दिखाने वाली किस्म पर देश के विभिन्न मौसमों और कृषि वातावरण वाले भागों में स्थित 100 से अधिक अनुसन्धान स्टेशनों पर दर्जनों प्रयोग किए जाते हैं, जो कश्मीर से केरल तक फैले हैं। इस ढांचे में कृषि विश्वविद्यालयों, राज्य सरकारों के अनुसन्धान केन्द्रों, केन्द्रीय धान अनुसन्धान संस्थान और भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, पूसा की महत्वपूर्ण भूमिकाएं हैं।

समन्वित धान अनुसन्धान परियोजना का लाभ यह हुआ है कि धान अनुसन्धान की तस्वीर तेजी से बदलने लगी हैं। अब यह कहना बेबुनियाद होगा कि अनुसन्धान में लगे वैज्ञानिक कल्याण सोना गेहूं जैसी उपज देने वाले धान विकास की स्थिति में नहीं है।

दिक्कतों का निवारण

धान उत्पादन पर मानसून का बड़ा प्रभाव पड़ता है। सूखे मौसम में होने के कारण गेहूं की फसल पर रोग-कीटों का प्रकोप कम होता है। दूसरी ओर धान पर बहुत से रोग कीटों का प्रकोप होता है। धान के खेत कहीं तो तेज पानी में डूबे रहते हैं और कहीं पर पौधे नमी की कमी के शिकार होते हैं। धान के कुछ क्षेत्रों में 30-40 इंच वर्षा वार्षिक होती है तो कुछ में 400 इंच। न केवल वर्षा की मात्रा कम अधिक है बल्कि वर्षा की मात्रा में साल दर साल इतनी बड़ा बड़ा होती है कि भविष्यवाणी करना लगभग असम्भव सा है।

धान की उचित समय पर बुवाई का बड़ा असर पड़ता हैं। यदि किस्म प्रकाश संश्लेषणीय है तो उस पर फूल एक समय पर आएगें और प्रकाश असंश्लेषणीय होने की दृष्टि में दूसरे समय। फूल आने के समय दोनों किस्मों के धान को काफी नमी की आवश्यकता होती है। बढ़वार की महत्वपूर्ण दशाओं में पौधे पानी की कमी सहन नहीं कर पाते।

1965 में जारी की गई धान की किस्मों की खेती लगभग 10 करोड़ एकड़ में हो रही है। इसमें से लगभग 67½ एकड़ क्षेत्र खरीफ की धान के अन्तर्गत है। जल्दी पकने और अधिक उपज देने वाली किस्मों के विकास से सघनता बढ़ी है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहां वर्षा नियमित है। कुछ क्षेत्रों में धान की दो फसलें भी ली जाती हैं। कृषि के सघनीकरण के कारण शक्ति, उर्वरकों और पौध-

केन्द्रीय धान अनुसन्धान संस्थान, कटक

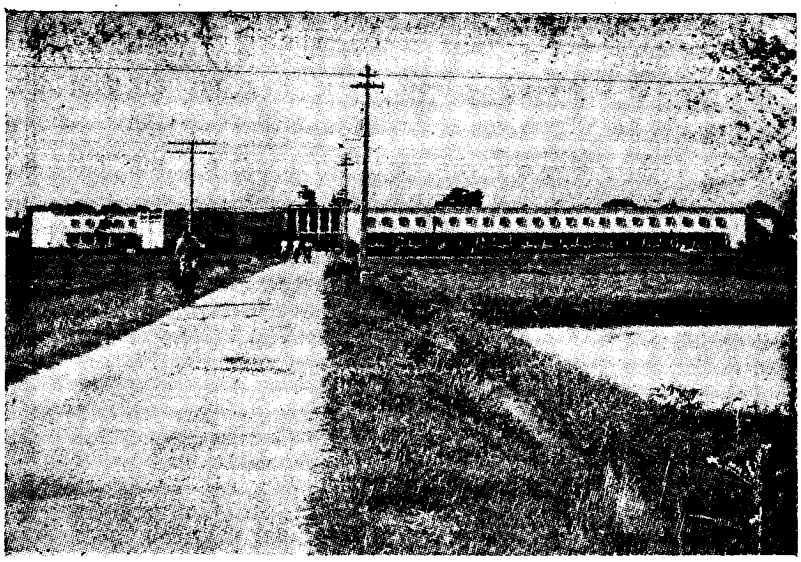

संरक्षण उपायों का महत्व भी बढ़ा है।

इस समय ऐसी धान की किस्मों के विकास का प्रयास किया जा रहा है जो जल्दी पकने वाली (लगभग 90-100 दिन) सीधी बुवाई को उपयुक्त और सूखा सहने वाली हों। कटक संस्थान की बाला और पदमा किस्में क्रमशः 85 और 105 दिन में तैयार हो जाती है। पूसा संस्थान द्वारा विकसित पूसा 2-21 लगभग 95 दिन में तैयार हो जाती हैं। इसे इस साल बुवाई के लिए जारी किए जाने की सम्भावना है।

धान विकास की दिशा में अगला बड़ा कदम तब होगा जब वैज्ञानिक ऐसी किस्मों का विकास कर पाएगें जो बढ़वार के दिनों में एक-दो फुट खड़ा पानी सह सकें, कभी कभी बाढ़ का मुकाबला कर सकें और पानी का ठहराव होने पर भी उग सकें। जगन्नाथ जिसे क्यूटेशन की प्रक्रिया द्वारा विकसित किया गया है, ऐसी किस्मों का पुरखा है।

वैज्ञानिक धान में रोग और कीट रोधी गुणों के समावेश का भी प्रयास कर रहे हैं। बड़े पैमाने पर कीटनाशक दवाओं पर निर्भर रहने की बजाए प्राकृतिक परजीवियों को अपनी भूमिका निभाने को प्रेरित किया जाता है और पौधों में ऐसे गुण पैदा किए जाते है जिससे कि वे रोग और कीटरोधी बनें। रत्ना और विजया किस्मों पर क्रमशः तना छेदक और होपर कीटों का प्रकोप नहीं होता।

देश भर में इस समय धान की 10,000 किस्मों की खेती हो रही है। पूसा संस्थान के भूतपूर्व निदेशक डाक्टर स्वामीनाथन के अनुसार अकेले आसाम और नेफा में 6,000 किस्मों की खेती की जा रही है। राजेन्द्र नगर में 500 संकरणों के 2,00,000 पौधों पर परीक्षण किए गए हैं। संकरणों को विभिन्न किस्मों से तैयार किया गया था जिनमें से 5,000 अकेले आसाम में थी।

धान की समन्वित अनुसन्धान परियोजना विशेष गुणों वाली दर्जनों किस्मों के विकास की सामर्थ्य रखती है। अब ऐसी किस्में तैयार हो सकेंगी जो पिछले पांच वर्षों में जारी की गई बौनी किस्मों की तुलना में अधिक उपज तो देगी ही, साथ ही उनमें वे कमियां भी नहीं होंगी जो बौनी किस्मों में है। अधिक उपज, पतला दाना, रोगकीट रोधिता के गुण, पकने में अच्छी और छिलका उतारने के समय दान ना टूटना इसकी विशेषता होगी। ऐसी एक किस्म अगले साल जारी होने की सम्भावना है।

धान में ऊपर दिए पांचों गुण होना बड़ी बात है। अब तक जारी की गई किस्मों से किसी में भी ये गुण नहीं। यदि किसी किस्म में अधिक उपज और बढ़िया दाने के गुण हैं तो उस पर रोग-कीटों का प्रकोप होता है। जो किस्म रोग कीट रोधी है वह अधिक उपज नहीं देती या उपभोक्ता उसे पसन्द नहीं करते। नई किस्मों में ये कमियां नही होंगी और अधिक उपज के मामले में तो वे क्रान्ति ला देंगी।

★●★

बचत और विकास का साधन डाकघर बचत बैंक·····[पृष्ठ 13 का शेषांश]

रकम जमा करने के बारे में छपी हुई सूचना मिलती है। यदि एक वाजिब मियाद के भीतर यह रसीद नहीं मिलती है तो तुरन्त हैड आफिस को खबर कर दी जानी चाहिए।

हर साल पहली अप्रैल के बाद सालाना सूद की रकम मूल में जोड़ने के लिए डाकघर की पासबुक पेश करनी चाहिए। इससे खाते में सूद की रकम तो जमा हो ही जाती है, साथ में साल में एक बार खाते में बाकी रकम की भी पुष्टि हो जाती है। हमेशा इस बात की भी सावधानी रखनी चाहिए कि खातेदार के दस्तखती फार्म किसी गैर जिम्मेदार आदमी के हाथ नहीं पड़े।

डाकघर में बचत बैंक का बड़ा भारी लाभ यह है कि खाता एक डाकघर से दूसरे डाकघर में बिना किसी फीस के बदला जा सकता है। इसके अलावा, खातेदार की रकम सरकार के पास जमा होने के कारण, इसके डूबने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता।

★

अपना रोजगार अपने हाथ

सुलेमान टाक

विश्व के स्वाधीन राष्ट्रों की श्रेणी में भारत एक आदर्श लोकतन्त्रात्मक राष्ट्र के रूप में जाना जाता है। संसार के बड़े-बड़े राष्ट्र भारत को एशिया की नवोदित शक्ति के रूप में देखने लगे हैं। राजनैतिक क्षेत्र में हमने पूर्ण स्वतन्त्रता 15 अगस्त, 1947 को प्राप्त की। सन् 1950 में संविधान के अनुसार भारत गणतन्त्र बना और वयस्क मताधिकार के आधार पर लोकतन्त्र की स्थापना करके हमने राष्ट्र के नागरिकों को राजनैतिक न्याय प्रदान किया। संविधान में अंकित मूल अधिकारों ने प्रत्येक भारतीय को स्वतन्त्रता के उपयोग का अवसर दिया।

जमींदारी उन्मूलन के साथ ही देश में सामन्तवादी शक्तियों का दमनकर सदियों से हो रहे शोषण का अन्त किया गया और धर्म, जाति आदि के आधार पर प्राचीन काल से पोषित ऊंच नीच की भावनाओं पर प्रतिबन्ध लगाकर नागरिकों को एक धरातल पर खड़ा कर सामाजिक न्याय प्रदान किया गया। यद्यपि इस क्षेत्र में अब भी हमें बहुत कुछ करना है जिसके लिए राष्ट्रकृतसंकल्प है। आज देश के सामने सबसे बड़ा प्रश्न है आर्थिक स्वतन्त्रता या न्याय का जिसके बिना जनता को राजनैतिक स्वतन्त्रता का स्वाद भी नीरस लगता जा रहा है। हमारे नवयुवक जिनके कन्धों पर हम भावी भारत के निर्माण की दीवारें खड़ी करना चाहते हैं वे बेकारी की समस्या से पीड़ित हैं। वास्तव में हम बेरोजगारी के दुष्चक्र में फंस गए हैं। देश की पंचवर्षीय योजनाओं में रोजगार की व्यवस्था के प्रयत्न करते हुए भी बेरोजगारी द्रौपदी के चीर की तरह बढ़ती ही जा रही है। मर्ज बढ़ता ही गया, ज्यूं ज्यूं दवा की। प्रथम योजना के आरम्भ में लगभग 45 लाख बेरोजगार थे जिनकी संख्या तृतीय योजना के अन्त तक दो करोड़ से भी अधिक हो गई और स्थिति उस समय और भी बिगड़ गई जब चतुर्थ योजना को तीन वर्षों के लिए स्थगित कर देना पड़ा। उस अवधि में देश की शिक्षा संस्थाएं तेज गति से स्नातकों का उत्पादन तो करती रहीं परन्तु रोजगार के अतिरिक्त अवसर उपलब्ध कर पाना सम्भव नहीं हो पाया।

बेरोजगारी की स्थिति इतनी विकट है कि साधारण स्नातक तथा उसके नीचे के स्तर के शिक्षित युवकों की तो बात छोड़िए इंजीनियरिंग, तथा मैडिकल की शिक्षा प्राप्त युवक भी हमें मायूस व बेरोजगारी से पीड़ित दीख रहे हैं। अध्ययनकाल में संजोए उनके सुनहरे स्वप्न धूमिल हो रहे हैं, उनका उत्साह निराशा में बदलता दीख रहा है। बेरोजगारी से पीड़ित युवक विक्षिप्त सा हो कर समाज और राष्ट्र के प्रति विद्रोह के लिए तत्पर है जिसकी झलक हमें कई बार विश्वविद्यालयों के दीक्षान्त समारोहों में डिग्री नहीं काम के नारों में दिखाई पड़ती है। ऐसे ही समय अवसरवादी राजनीतिज्ञों के चंगुल में फंस कर गुमराह होकर हमारे युवक लोकतन्त्र विरोधी कार्य, हड़ताल, तोड़फोड़ कर बैठते हैं जिससे राष्ट्रीय शक्ति का अपव्यय होता है। विकास कार्य अवरुद्ध हो जाते हैं। बेरोजगारी की चुनौती बड़ी प्रबल है उसका प्रभाव बड़ा भयावह है, अतः राष्ट्रीय कल्याण के लिए जनशक्ति का विवेकपूर्ण, यथार्थपरक तथा व्यावहारिक उपयोग वांछनीय ही नहीं, अपरिहार्य है। हमारे राष्ट्रपति श्री गिरि के शब्दों में हमारी समझ में हमारी सबसे बड़ी समस्या है बेरोजगारी और गरीबी। हम निःसन्देह एक दुष्चक्र में फंस गए हैं, लेकिन अगर हमें राष्ट्र के रूप में जीवित रहना है तो इस दुष्चक्र को समाप्त करना होगा। हमें पूर्ण नियोजन के साथ साथ तीव्र आर्थिक विकास का साहसिक कार्यक्रम बनाना होगा। इसके लिए आवश्यक है कि हम ऐसी सक्रिय योजनाएं बनाएं जिनमें हमारी जनशक्ति के पूर्ण उपयोग पर मुख्य रूप से जोर दिया गया हो।

जनशक्ति का पूर्ण उपयोग यदि हम कर सकने में सफल हो सकें तो निश्चित रूप से बेरोजगारी तथा गरीबी मिट जाएगी किन्तु इसके लिए हमें केवल सरकारी योजनाओं का प्रतीक्षा करना उचित नहीं रहेगा। युवकों को, जो राष्ट्र की वास्तविक शक्ति हैं, स्वयं निर्माण की ओर सक्रिय होना है। उन्हें अपने पांवों पर खड़ा होने का संकल्प लेना होगा क्योंकि राष्ट्र रूपी अट्टालिका की नींव की ईंट उन्हीं को बनना है, जिस पर राष्ट्र की मजबूती निर्भर करती है। युवकों की वर्तमान मनोवृत्ति तथा उनका चिन्तन ही भावी भारत को मूर्तरूप देगा। जैसा उनका चिन्तन होगा वैसा ही भारत बनेगा। हम राष्ट्र को उस मंजिल तक ले जाना चाहते हैं जहां हमारा आर्थिक और सामाजिक सत्ता सम्पन्न पूर्ण स्वराज्य का स्वप्न साकार हो सके। यदि इस लक्ष्य के लिए हमारा युवक वर्ग कार्यरत नहीं हुआ तो हमारा यह संकल्प कागजों में ही अंकित रह जाएगा।

रोजगार प्राप्ति के प्रश्न पर विचार करने पर हम देखते हैं कि अशिक्षित वर्ग की अपेक्षा शिक्षित वर्ग कई गुना अधिक

पीड़ित है, मानो उसकी शिक्षा ही बेरोजगारी को बढ़ावा दे रही है। निष्पक्ष दृष्टि से देखें तो पाएंगे कि रोजगार प्राप्ति के हजारों क्षेत्र हैं, स्थान हैं जहां व्यक्ति अपनी रोजी रोटी कमा सकता है किन्तु शर्त यह है कि वह मेहनत करने के लिए तत्पर रहे। यह हमारा दुर्भाग्य है कि शिक्षित युवक अपनी शिक्षा को नौकरी, विशेषकर सरकारी नौकरी के मापदण्ड से मानते हैं, जितनी उच्च शिक्षा उतने ही उच्च पद की आकांक्षा में वे 'कै हंसा मोती चुगे कै भूखों मर जाये' की मनोवृत्ति में उलझे रहते हैं। युवक शरीरिक श्रम से कतराता है। उसे पेट भरने की परवाह चाहे न हो पर वस्त्रों को चमकीले रखने की चिन्ता है, चाहे इस चिन्ता में उसका भविष्य धूमिल हो जाए, 'मर जाना पर दलिया नहीं खाना' ही उसकी फिलासाफी है। युवकों को इस तथ्य को समझना चाहिए कि देश की प्रगति का आधार केवल उजले वस्त्र और आरामतलबी नहीं है बल्कि अधिकाधिक परिश्रम है। देश को आज चिकने चेहरों और उजले वस्त्रों में लिपटे अपटूडेट कहे जाने वाले बाबुओं की नहीं किन्तु कुशल मजदूरों और किसानों की आवश्यकता है जो पसीने में गंगाजल की पवित्रता देखते हैं।

श्रम से मुंह छिपाने की प्रवृत्ति बीते युग की सामान्तवादी प्रवृत्ति का अभिशाप है। उस काल में सबसे कम काम करने वाला (राजा, जागीरदार ठाकुर, आदि) बड़ा आदमी होता था पर आज प्रजातन्त्र में जब प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का भाग्यविधाता है तो ऐसी स्थिति में अधिक से अधिक काम करने वाला ही सबसे बड़ा आदमी है चाहे वह किसान हो या मजदूर। आज हमारे युवकों के दृष्टिकोण में यही परिवर्तन आ जाना अत्यन्त आवश्यक है कि वह श्रम, विशेषकर शारीरिक श्रम की महिमा को समझे। किन्तु कितनी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि कई युवकों के लिए रोजगार लायक काम का अभाव नहीं होता, किन्तु वे उस काम से कतराते हैं, घृणा करते हैं। उदाहरणार्थ कई शिक्षित युवक ऐसे हैं जिनके अभिभावक परचून की दुकान करते हैं जहां वे स्वयं भी पर्याप्त कार्य प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु नौकरी की मनोवृत्ति में उलझे युवक उस दुकान पर बैठकर तराजू तोलने या पुड़िया बांधने में शर्म महसूस करते हैं मानों यह कार्य उनके लिए धन्धा न होकर अनाचार है। दुकान पर बैठकर व्यापारी या मजदूर की तरह काम करना वे अपनी डिग्री का अपमान सा समझते हैं और ऐसा कहते पाए जाते हैं कि अगर यही काम करना था तो फिर डिग्री लेने पर समय क्यों बर्बाद करते? उनकी दृष्टि में अपनी डिग्री का सम्बन्ध केवल नौकरी से है। खेद की बात तो यह है कि अभिभावक स्वयं भी अपने शिक्षित बच्चों से यही आशा रखते हैं कि वे डिग्री लेकर "राज में पैर जमाएं।" युवकों को चाहिए कि वे अपने अभिभावकों को वर्तमान रोजगार की समस्या को समझा कर "बैठे से बेगार भली" के अनुसार नौकरी की प्रतीक्षा में समय बर्बाद नहीं करते हुए, शारीरिक श्रम के प्रति निष्ठा रखकर जैसा भी कार्य मिले उसे करने में जुट जाएं, छोटे से छोटे धन्धों को अपना कर भी वह मेहनत तथा लगन से अपना भविष्य अवश्य निखार सकेगा।

यह तो सत्य है कि राज्य प्रत्येक नागरिक की रोटी की व्यवस्था करे, किन्तु यह बात कहां तक न्यायोचित है कि वह सबके लिए नौकरी, नौकरी भी ऐसी जिसे 'वाइट कालर जाब' कहते हैं, की ही व्यवस्था करें? युवकों को यह बात मुख्य रूप से ध्यान में रखनी चाहिए कि राज्य के पद सीमित हैं और उम्मीदवारों की संख्या उपलब्ध पदों से कई गुणा अधिक है। अतः केवल सरकारी पद को ही रोजगार समझने वालों को व्यावहारिक दृष्टिकोण रखते हुए क्लर्की और अफसरी अर्थात कुर्सी पर बैठे रहने की अभिलाषा को त्याग कर ऐसा कार्य करने को तैयार रहना चाहिए जहां शारीरिक श्रम करके पसीना बहाना होता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि शिक्षा का सम्बन्ध कुर्सी से हटा कर औजारों से, मशीनों से अर्थात हाथ की मेहनत से जोड़ा जाना आवश्यक है। युवकों को यह सदैव याद रखना चाहिए कि बाबूगीरी की भूख जगाई थी अंग्रेजों ने जिनके जमाने कभी के लद चुके। उन्होंने शिक्षा का सम्बन्ध अपनी राजनैतिक आवश्यकता के अनुरूप क्लर्की या अफसरी अर्थात कुर्सी से जोड़ा था क्योंकि उन्हें अपने शासन के कागजी घोड़ों को चलाने के लिए भारतीय बाबुओं की आवश्यकता थी, आज भी उसी बाबूगीरी की मनोवृत्ति में उलझे रहना देश के प्रति हमारी अजागरूकता ही कही जाएगी क्योंकि आज नवनिर्माणों के आकांक्षी भारत को आवश्यकता है कुशल मजदूर और किसान की जो हरित क्रान्ति और औद्योगिक क्रान्ति के द्वारा गरीबी और भुखमरी को मिटाना चाहता है, जिसके लिए हम सबको कठोर परिश्रम करना है। क्या हम अब तक भी क्लर्क बनकर कुर्सी पर बैठे रहने की कामना करके राष्ट्र का अहित नहीं कर रहे हैं?

युवकों को चाहिए कि वे कुर्सी के मोह में फंसे रहकर केवल इंटरव्यू के काल की प्रतीक्षा में ही समय बर्बाद नहीं करें किन्तु स्वयं प्रयत्नों से कार्य ढूंढें या घर में उपलब्ध कार्य को करने में लग जाएं किन्तु बात तो वहां विकट हो जाती है कि टेलरिंग का डिप्लोमा प्राप्त युवक स्वतन्त्र रूप से दर्जी की दुकान, जहां आमदनी के अपेक्षाकृत अधिक अवसर हैं, न करके किसी स्कूल में क्राफ्ट टीचर बनकर नपी तुली रोजी, जिसे वह आराम कहता है, को ही प्राथमिकता देता है और इंटरव्यू कार्ड की प्रतीक्षा करता हुआ बेरोजगारी की समस्या को बढ़ाने का सामाजिक पाप करता है।

ऊपर जो बात कही गई है वह मुख्य रूप से रोजगार के सम्बन्ध में युवकों की मनोवृत्ति या दृष्टिकोण से सम्बन्धित है। अब हम युवकों को उन व्यावसायिक क्षेत्रों का सुझाव देंगे जहां वे आसानी से

रोजी प्राप्त कर सकते हैं। भारत कृषि प्रधान देश है तथा जहां पर प्राकृतिक साधनों के स्रोतों की भी प्रचुरता है जिससे पर्याप्त औद्योगिक विकास के अवसर है। इसीलिए कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध किए जा सकते हैं। हमारे राष्ट्रपति श्री गिरि ने इस सम्बन्ध में उचित ही कहा है कि रोजगार के बहुसंख्यक अवसरों का निर्माण तभी हो सकता है जब हम कृषि और उद्योगों की समन्वित योजना तैयार कर सकें।

कृषि स्नातकों का सीधा सम्बन्ध कृषि से जोड़ा जाना चाहिए। इन युवकों को कृषि योग्य जमीनें उपलब्ध कराई जाएं जहां बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने के काम से लेकर सहकारिता के आधार पर कृषि करने का दायित्व इन्हीं स्नातकों पर डाला जाए जिससे यह लोग अपने अर्जित ज्ञान का अधिकाधिक व्यावहारिक उपयोग करके रोजी कमा सकें। ऐसे धन्धों से दुहरा लाभ होगा, पहला बेरोजगारी की समस्या का निवारण और दूसरा हरित क्रान्ति को सहयोग मिलेगा जिससे खाद्य समस्या निराकरण भी हो सकेगा। इसके साथ ही अपने विद्यार्थीकाल में अर्जित सैद्धान्तिक ज्ञान के आधार पर ये लोग कृषि को उन्नत कर सकेंगे, इनकी विधियां व कृषि का ढंग हमारे अन्य किसानों के लिए भी प्रेरणादायी होगा। कृषि व्यवसाय के अन्तर्गत खाद्य, बीज, कीटाणुनाशक दवाइयां, कृषि औजारों के बिक्री केन्द्र,ग्रामीण पशु चिकित्सालय, ट्रैक्टरों द्वारा किराए पर खेतों की जुताई आदि धन्धों के विकास विस्तार के लिए बहुत बड़े अवसर हैं जिसे कृषि तथा तकनीकी शिक्षा प्राप्त युवक बड़ी कुशलता से कर सकते हैं। कृषि उपजों की खरीद तथा बिक्री के व्यवसाय में कई व्यक्ति खपाए जा सकते हैं। ऐसे खरीद बिक्री केन्द्र गांवों में खोलकर किसान को मण्डी में पहुंचने के झंझट से मुक्त किया जा सकता है।

हम देखते हैं कि आजकल विकास कार्यों से प्रभावित किसान कृषि के यन्त्रीकरण की ओर झुकते जा रहे हैं। किसान ट्रैक्टर खरीद रहे हैं, कुओं पर इंजन या बिजली की मोटर लगाते हैं किन्तु इन मशीनों में थोड़ी सी गड़बड़ किसान के लिए सिरदर्द बन जाती है। उसे शहरों में मरम्मत करने वालों के पीछे फिरना पड़ता है। साथ ही समय पर मरम्मत नहीं हो पाने पर फसल को हानि होती ही है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि औजारों की निर्माणशालाओं तथा औजारों व मशीन की मरम्मत घरों की स्थापना की अत्यन्त आवश्यकता है। यहां इंजीनियरिंग की डिग्री या डिप्लोमा प्राप्त युवकों को बड़े अच्छे काम के अवसर उपलब्ध हो सकेंगे।

युवकों को कृषि और तकनीकी कार्यों के अतिरिक्त विविध कुटीर उद्योगों की ओर प्रवृत्त होना चाहिए। यह इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि भारत में जनसंख्या अधिक है। अतः ऐसे उद्योगों को जिनमें मानव शक्ति का अधिकाधिक उपयोग हो ज्यादा महत्व देना होगा और यह कुटीर उद्योगों में ही सम्भव है जहां बड़ी मात्रा में लोगों के काम पर लगाने के अवसर हैं। इन उद्योगों के अन्तर्गत दैनिक जीवन के उपयोग की वस्तुएं जैसे तेल, साबुन, दन्तमंजन, कागज, स्याही, चाक आदि वस्तुओं का बनाना, निवाड़, आसन, तौलिए, रूमाल आदि का बुनना सिलाई, कशीदाकारी, कपड़ों की रंगाई, हजामत बनाना, कपड़ों की स्त्री करना आदि दैनिक जीवन की आवश्यकताओं के कार्य, मुर्गी तथा मधुमक्खी पालन का कार्य आदि धन्धे हैं जहां विज्ञान, कला व वाणिज्य सभी प्रकार के शिक्षित युवक रोजी प्राप्त कर सकते हैं। इन वस्तुओं के उत्पादन के साथ ही साथ कई युवक इन वस्तुओं के बिक्री केन्द्र स्थापित करके या सेल्समैन बनकर भी रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। आर्थिक दृष्टि से ये ऐसे धन्धे हैं जिनकी स्थापना के लिए अधिक पूंजी, स्थान आदि की भी जरूरत नहीं होती तथा विशेष तकनीकी ज्ञान भी आवश्यक नहीं है।

अगर युवक श्रम के प्रति निष्ठावान होकर सरकारी नौकरी का मोह त्याग कर, शहरी चकाचौंध भरी जिन्दगी का आकर्षण छोड़कर हर उपलब्ध धन्धे को अपनाने के लिए तत्पर हो जाएं तो हम पाएंगे कि अधिकांश युवकों के घरों में ही उन्हें रोजी मिल जाएगी। हम जानते हैं कि भारत में प्राचीन काल से ही कार्य के आधार पर समाज के वर्ग बने हुए थे। मैं क्या धन्धा करूं ? युवक इस समस्या से मुक्त था, अपने पैतृक धन्धे जिसे वह बचपन से ही समझने लगता था उसमें प्रवेश कर लेता था। आज भी हम जानते हैं कि अधिकांश परिवारों में किसी न किसी वस्तु का उत्पादन कार्य या बिक्री के रूप में कोई न कोई धन्धा पैतृक पेशे के रूप में मिलता ही है। पढ़े लिखे युवकों को अपने इन पैतृक धन्धों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखना चाहिए। उन्हें इन धन्धों को नीची नजर से नहीं देखना चाहिए परन्तु उन्हें वर्तमान बेरोजगारी की स्थिति में उसी धन्धे के विकास का संकल्प कर उसी में लगना चाहिए। उदाहरणार्थ किसी युवक के अभिभावक बुनकर हैं तो उस युवक को चाहिए कि वह नौकरी के लिए मारा मारा फिरने की अपेक्षा उसी धन्धे में जी लगाकर आधुनिक यन्त्रों आदि के उपयोग द्वारा उसे विकसित करने पर ध्यान दे। इसी प्रकार उसे अपने स्कूल कालेज में अर्जित ज्ञान के आधार पर अपने द्वारा निर्मित वस्तु को कम लागत पर उत्पन्न करने तथा बिक्री बढ़ाने जैसी बातों पर ध्यान देना चाहिए। निश्चित रूप से अगर नवयुवक ऐसा कर सकेंगे तो वे पाएंगे कि उनका घर स्वयं ही उनके लिए नियोजन केन्द्र है।

स्वतन्त्र रूप से युवक विविध क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त कर सकें इसके लिए यह भी आवश्यक होगा कि युवकों को उचित प्रोत्साहन दिया जाए, सरकार उनकी सहायतार्थ तत्पर रहे। व्यवसाय प्रारम्भ करने या विकसित करने के लिए उन्हें

पर्याप्त वित्तीय सहायता कम से कम ब्याज की दर पर प्रदान की जाए। शक्ति के साधन सुलभ हों तथा आवश्यकता पड़ने पर उनका मार्गदर्शन किया जाए तथा कुटीर उद्योगों को बड़े उद्योगों की प्रतिस्पर्धा तथा प्रतियोगिता से बचाए जाने की व्यवस्था हो। इन कार्यों में कम से कम सरकारी हस्तक्षेप होना चाहिए।

स्व-प्रयत्नों से व्यवसाय में प्रवेश की उपरोक्त बातें फलवती हों इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षण काल में ही युवकों के दृष्टिकोण को बदलने का प्रयास किया जाए तथा उन्हें व्यवसाय के लिए मानसिक दृष्टि से प्रेरित किया जाए, इसके लिए उन्हें स्कूलों तथा कालेजों में व्यावसायिक निर्देशन दिया जाना चाहिए। छात्रों को उपलब्ध धन्धों के विविध क्षेत्रों तथा सम्भाव्य व्यवसायों का ज्ञान कराया जाए। उन धन्धों में प्रवेश का तरीका, इसके लिए पूर्व तैयारी, भविष्य में तरक्की की सम्भावनाओं आदि बातों को स्पष्टतया उनके सामने रखा जाए। उन्हें विशेष रूप से यह बताया जाए कि नौकरी की तुलना में स्वतन्त्र व्यवसाय करने में क्या क्या लाभ हैं तथा आर्थिक सामाजिक दृष्टि से किस प्रकार हितकर है। विविध व्यवसायों के सही आकर्षण दिखाकर उन्हें बाबूगीरी के भ्रमजाल से मुक्त किया जा सकता है जिससे नौकरियों की मांग कम होगी और उत्पादक तथा वाणिज्य-व्यापार सम्बन्धी कार्यों का विकास होगा, रोजगार की समस्या का हल निकलेगा तथा उद्योग व्यापार की दृष्टि से राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी। युवक नौकरी वाला न बनकर आत्म केन्द्रित व्यक्ति बन कर देश के आर्थिक ढांचे को सुदृढ़ करने वाला राष्ट्रहितैषी नागरिक बन सकेगा।

बेरोजगारी निवारण के सम्बन्ध में दायित्व समाज का भी है और राष्ट्र का भी, लेकिन सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका युवक ही निभा सकते हैं। क्योंकि यह एक राष्ट्रीय समस्या है अतः समाज की परिस्थितियों तथा वर्तमान आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए जहां कहीं जैसा काम मिले उसी में खुशी खुशी जुट जाना चाहिए। यही बात उनके तथा राष्ट्र के हित में है। काम या धन्धे का मूल्यांकन उसे आज के सन्दर्भ में नहीं करके भावी प्रगति की सम्भावनाओं से करना चाहिए और यह स्मरण रखना चाहिए कि जितना श्रम करेगा उतना ही वह धन्धा फलदायी होगा। इसमें स्पष्ट है कि प्रगति व सफलता की कुंजी स्वयं युवक के हाथों में है।

हमारा राष्ट्र वर्तमान में नए दौर से गुजर रहा है। हमें अपनी कमजोरियों तथा गलत मानसिक धारणाओं को त्याग कर शोषण व्यवस्था को समाप्त कर राष्ट्र को बहुत आगे ले जाना है। इसके लिए हमें आत्म-निर्भर होना है जिसका मूलमन्त्र है श्रम, फिर भला श्रम में शर्म क्यों?

समय नवयुवकों का आह्वान कर रहा है, युवको! उठो, अकर्मण्यता त्यागो, राष्ट्र तुम्हारे हाथों नवनिर्माण की प्रतीक्षा कर रहा है। ✱

खेतों में खलिहानों में

तारादत्त 'निर्विरोध'

नई फसल के गीत गूंज रहे खेतों में, खलिहानों में।
हर पत्थर में फूल खिलाने पौरुष जागा इन्सानों में।।

श्रम ने और स्वेद ने मिल कर
नव निर्माण सजाए,
धरती से ले दूर गगन तक
करतब सभी दिखाए,

कर्म चेतना अमर हो रही जीवन और पाषाणों में।
हर पत्थर में फूल खिलाने पौरुष जागा इन्सानों में।।

पिछड़ापन सब दूर हो गया
उन्नति के दिन आए,
सुख-समता-सादर-समाज सब
एक रूप हो पाए,

किसी तरह का भेद नहीं अब, रोजी-रोटी में, धानों में।
नई फसल के गीत गूंज रहे, खेतों में, खलिहानों में।।

परम्पराएं और रूढ़ियां
हुई जर्जरित सारी,
महक रही हैं सपने लेकर
जीवन की फुलवारी,

खुशियां फिर अंगड़ाई लेतीं, गोबर से पुते मकानों में।
हर पत्थर में फूल खिलाने, पौरुष जागा इन्सानों में।।

बच्चों में अच्छी आदतें डाली जाएं

अखिलेश 'अंजुम'

बच्चे मनोवैज्ञानिक रूप से ऐसे कोमल तत्व हैं, ऐसी कच्ची मिट्टी हैं जिन्हें जैसे भी चाहें, हम अपनी इच्छानुसार ढाल सकते हैं। बच्चे, अपने चारों तरफ फैली परिस्थितियों को चुपके चुपके अपने अन्दर समेटते रहते हैं। यहां तक कि जैसा वे हमें करते देखते हैं, वैसा ही स्वयं करते हुए तनिक भी नहीं घबराते। किसी भी काम को करते हुए उसकी अच्छाई बुराई के विषय में सोचना उनकी सामर्थ्य के बाहर होता है।

ऐसी परिस्थितियों में हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि बच्चों की बाल-सुलभ चेष्टाओं को ऐसी दिशा प्रदान करते रहें, उन्हें ऐसा मार्गदर्शन देते रहें ताकि आने वाले कल में वे सुयोग्य नागरिक के कर्त्तव्यों का भली प्रकार निर्वाह करते रहें। बच्चों का कौतूहल धीरे-धीरे उनके अवचेतन मन पर कालान्तर में अमिट छाप बनकर उभरता है। अपने परिवार में बीड़ी-सिगरेट पीने वालों को बच्चे किस कौतूहल से देखते हैं यदि आप इसका अध्ययन करें तो स्वयं आपको यह सत्य प्रकट हो जाएगा। गांव में बीड़ी-सिगरेट और हुक्का पीने का आम रिवाज है। वहां बच्चों से चिलम भरवाने या बीड़ी सुलगा लाने को कहा जाता है। यहां तक होता है कि नटखट बच्चों के प्रति परिवार के लोगों के अधिक स्नेह के कारण उन्हें बीड़ी पीने की नकल करते हुए देखकर कोई कुछ नहीं कहता। कभी-कभी बच्चे को ऐसा करते देख, परिवार के लोग खुश भी बहुत होते हैं। मैंने अपने गांव के पड़ोस में एक बच्चे के परिवार जनों को स्वयं उसके मुंह में बीड़ी लगाते देखा है। बच्चा जब धुएं के कड़वेपन से मुंह बनाता है या धुएं के आंखों में लग जाने से आखें मिचमिचाता है तो लोग उसे अपना मनोरंजन समझ बच्चे की चेष्टाओं पर हंसते हैं। क्या हम ऐसे बच्चों से यह अपेक्षा कर सकते हैं कि वह बड़े होकर इस व्यसन से दूर रह सकेंगे? ऐसे बच्चे तो अपने शैशवकाल से ही धूम्रपान के आदी हो जाते हैं। आज बड़ी भारी संख्या में बच्चे सिर्फ इसी वजह से इस दुर्व्यसन के दलदल में फंसते जा रहे हैं। शहरी गांजा, सुलफा और चरस आदि के इसीलिए शिकार हैं कि उनकी इन चेष्टाओं के प्रति समाज और उनका परिवार दोनों ही लापरवाह हैं। समय रहते इस ओर विशेष सतर्कता की आवश्यकता है।

हमारे आपके जीवन में भी जो अपने को सभ्य और सुसंस्कृत कहते हैं, ऐसी अनदेखी परिस्थितियां उभरती हैं जिनके प्रति हमारी लापरवाही बच्चों में कुचेष्टाओं को जन्म देती है। हम चाहे बच्चे को सिगरेट पीते देख या पिलाकर प्रसन्नता अनुभव न करें किन्तु स्वयं की कुछ चेष्टाओं से उनके मन में जिज्ञासा अवश्य पैदा कर देते हैं। परिवार के व्यक्ति को सिगरेट पीते देख स्वयंमेव उनके मन में भी सिगरेट पीने की लालसा उठती हैं। यूं बाहरी वातावरण के प्रभाव से अधिक नहीं बचा जा सकता किन्तु ऐसे प्रयास तो अवश्य ही किए जा सकते हैं कि दुर्व्यसनों का कम से कम प्रभाव बच्चों पर पड़े। स्वयं परिवार के लोग बच्चों के सामने धूम्रपान न करें। कमरों में बीड़ी सिगरेट के टुकड़े यूं ही बिखरे पड़े न रहने दें। अपने मित्रों, मिलने-जुलने वालों को कोई ऐसा प्रयत्न न करने दें जो बच्चों के अवचेतन मन पर कोई बुरा प्रभाव डाले। बच्चे जब थोड़े समझदार हो जाएं तो उन्हें अवगत कराएं। प्रारम्भ से ही ऐसी चेष्टा की जाए कि बच्चों को दुर्व्यसनों के बीच पलने का या तो मौका ही न मिले या फिर वे आपकी ज्ञान भरी बातों की ढाल से ऐसी परिस्थितियों का सामना कर सकें। हालांकि यह कार्य दुरूह है किन्तु यदि प्रारम्भ से ही इस दिशा में प्रयत्न किए जाते रहें तो सफलता अवश्य मिलती है। आप पर, आपके समझाने के तरीकों पर निर्भर करता है कि बच्चों पर कितना और कैसा प्रभाव पड़ता है।

घर में चार बर्तन होते हैं तो खटकते ही हैं। पति-पत्नी या परिवार के अन्य सदस्यों में टकराव या झगड़ा अक्सर हो जाता है। बच्चों के सामने ही यदि आप लड़ने-झगड़ने, गाली-गलौच करने लग जाते हैं तो इससे यह होता है कि बच्चों में मां-बाप या परिजनों के प्रति स्नेह, आदर, अपनत्व एवं डर स्वयमेव समाप्त हो जाता है। यहां तक होता है कि सम्बन्धित व्यक्तियों के प्रति बच्चों में घृणा उत्पन्न हो जाती है। संयुक्त परिवार प्रथा की समाप्ति का कोई और कारण हो या न हो किन्तु यह भी एक बड़ा कारण है कि परिवार जनों में परस्पर सहयोग, स्नेह भाव एवं आदर का अभाव है। इन परिस्थितियों की नींव प्रारम्भ से ही पड़ती है। बच्चे जैसा बड़ों को करते देखते हैं वैसा ही स्वयं भी करते हैं। मेरे पड़ोस के परिवार में जहां पहले बड़े भाई एवं उसके छोटे भाई के परिवार में एक दूसरे के

शेष पृष्ठ 23 पर]

गेहूं का वसूली मूल्य

एम० एल० शर्मा

गेहूं के वसूली मूल्य को कम न करने के सरकार के निर्णय के प्रति जन साधारण में विभिन्न प्रतिक्रियाएं हैं। साधारणतया बहुमत सरकार के इस निर्णय से सहमत है। पत्र-पत्रिकाओं में सरकार की इस नीति की तीखी आलोचना की गई है। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि इस निर्णय से अर्थशास्त्री अथवा पढ़ी लिखी जनता सहमत नहीं है। दोनों पक्ष इस निर्णय के पक्ष एवं विपक्ष में तर्क देते हैं। परन्तु वास्तविक स्थिति को समझने के लिए परिस्थितियों एवं तथ्यों को सम्मुख रखना आवश्यक है।

कृषि मूल्य आयोग ने अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि 1972-73 में देसी लाल गेहूं का वसूली मूल्य 66 रुपए प्रति क्विण्टल (गत वर्ष यह मूल्य 71-74 रुपये था) और मैक्सिकन किस्म के गेहूं की कीमत 72 रुपए प्रति क्विण्टल (गत वर्ष यह कीमत 76 रुपये थी) होनी चाहिए।

गेहूं की कीमत में कमी की सिफारिश करने के आयोग के निर्णय के पक्ष में मुख्य रूप से दो कारण दिए गए हैं—

1. देश में हरित क्रान्ति के फलस्वरूप गेहूं के उत्पादन में बढ़ोतरी तथा (2) गेहूं उत्पादन-लागत निर्धारित वसूली मूल्य से कम। अतः उत्पादक के लाभ में कीमत के कम होने से कोई विशेष अन्तर नहीं आएगा।

हरित क्रान्ति

इस बात से तो कोई इन्कार नहीं कर सकता कि देश में खाद्यान्नों, विशेषतः गेहूं के उत्पादन में उत्साहजनक वृद्धि हुई है और अब हम आत्म-निर्भरता तथा थोड़ा बहुत निर्यात करने की स्थिति में भी हैं। बंगला देश को कुछ खाद्यान्न भेजा भी गया है पर इसका अर्थ यह नहीं कि हम अपने कृषि प्रयासों में ढील दे दें। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि गत कुछ वर्षों से वर्षा अच्छी होती रही जिसके परिणामस्वरूप अधिक उत्पादन में सहायता मिली है। यद्यपि सिंचाई व्यवस्था में काफी बढ़ोतरी हुई है फिर भी अभी हम अनेक क्षेत्रों में वर्षा पर ही निर्भर हैं। दूसरी बात यह है कि हरित क्रान्ति केवल दो ही राज्यों—पंजाब और हरियाणा में पूर्ण रूप से सफल है। बाकी राज्य अभी बहुत पीछे हैं। केवल दो ही राज्यों में हरित क्रान्ति के आधार पर यह कहना कि अब किसान को कीमत के रूप में प्रोत्साहन न देने की आवश्यकता नहीं रही, युक्तिसंगत नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि हमें अभी हरित क्रान्ति की गति को उन राज्यों में भी तेज करना है जहां अभी भी अपनी आवश्यकता के लिए अन्न का उत्पादन नहीं होता।

उत्पादन मूल्य

कृषि मूल्य आयोग ने उत्पादन मूल्य निर्धारित करने में किन तथ्यों का सहारा लिया है, यह कहना तो कठिन है पर यह कहना असंगत न होगा कि इनके निर्णय में कहीं कोई कमी अवश्य है। दो चार बड़े फार्मों के आधार पर निष्कर्ष निकालना हमेशा ही त्रुटिपूर्ण होता है। इस सन्दर्भ में लुधियाना कृषि विश्वविद्यालय द्वारा किए गए अध्ययन को ही ठीक मानना उचित होगा। विश्वविद्यालय ने लघु, मध्यम तथा बड़े किसानों का अध्ययन किया तथा उसके आधार पर जो निष्कर्ष निकाले वे इस प्रकार हैं :—

अध्ययन के अनुसार बड़ी जोत के सन्दर्भ में प्रति हैक्टेयर गेहूं उत्पादन मूल्य 1554 रुपये और लघु जोत के सन्दर्भ में 1700 रुपये है। औसत उत्पादन मूल्य 1621 रुपये प्रति हैक्टेयर है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि गेहूं का उत्पादन मूल्य लगभग 65 रुपए प्रति क्विण्टल है। वसूली 76 रुपए और उत्पादन मूल्य 65 रुपये होने से उत्पादक को केवल 11 रुपये प्रति क्विण्टल का ही लाभ होता है।

जहां तक कुल उत्पादन और कुल लाभ का प्रश्न है उसके लिए भी हमें लुधियाना कृषि विश्वविद्यालय द्वारा किए गए अध्ययन का ही सहारा लेना पड़ेगा। अध्ययन के अनुसार बड़ी जोत के सम्बन्ध में प्रति हैक्टेयर गेहूं उत्पादन 27 क्विण्टल, मध्यम जोत में 22-23 क्विण्टल और 6 एकड़ से कम वाली जोत में 20 क्विण्टल है।

उत्पादन मूल्य एवं उत्पादन के आधार पर शुद्ध लाभ हम निम्न प्रकार निकाल सकते हैं :—

कुल उत्पादन प्रति एकड़— 27 क्विण्टल।

उत्पादन मूल्य प्रति क्विण्टल—65 रुपये।

कुल व्यय – $27 \times 65 = 1755$ रुपए।

कुल उत्पादन प्रति एकड़ 27 क्विण्टल

कीमत प्रति एकड़ 76 रुपए

कुल आय $76 \times 27 = 2052$ रुपए

शुद्ध लाभ $2052 - 1755 = 297$ रुपए

या 300 रुपए

इसमें यदि 150 रुपये भूसे की कीमत भी जोड़ दी जाए तो प्रति हैक्टेयर लाभ 450 रुपये के लगभग बनता है।

इसके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि गेहूं वसूली मूल्य और उत्पादन मूल्य में अधिक अन्तर नहीं है और वर्तमान स्थिति में वसूली मूल्य को कम करना उचित नहीं है।

लागत में कमी

कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि किसान को चाहिए कि वह उत्पादन मूल्य में कमी करे। इस तरह यदि गेहूं की कीमत में कमी कर दी जाए तो किसान के लाभ में कोई कमी नहीं आएगी। इस तर्क में बहुत त्रुटि है। कुछ राज्यों, विशेषकर पंजाब और हरियाणा में कृषि मजदूरों की बहुत कमी है। कम वेतन पर कोई भी मजदूर कार्य करने को तैयार नहीं नहीं है। इसलिए कृषि मजदूरी में कटौती करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। बल्कि उनको अधिक वेतन मिलना चाहिए जिससे कि हरित क्रान्ति का लाभ उन्हें भी मिल सके।

1972-73 के बजट में उर्वरकों पर कर बढ़ा दिया गया है। इसके परिणाम-स्वरूप उर्वरकों की कीमत में भी बढ़ोत्तरी हो गई है। क्या इनके प्रयोग में कटौती की जा सकती है? कटौती की गई तो उत्पादन कम होगा और उत्पादन कम होने से तो कीमत बढ़ेगी ही।

यह कहना भी बाजिब नहीं कि अधिक वेतन देने के बजाए किसान अपनी कृषि का मशीनीकरण कर सकता है। हमारी कृषि जोतें भी इस काबिल नहीं कि उनका मशीनीकरण किया जाए। दूसरे मशीनीकरण से बेरोजगारी बढ़ेगी।

निष्कर्ष यह निकलता है कि वर्तमान स्थिति में उत्पादन मूल्य में कमी नहीं की जा सकती और उत्पादन मूल्य के सन्दर्भ में निर्धारित कीमत भी अधिक नहीं है। इसमें कटौती के लिए कोई गुंजाइश नहीं है।

इसके साथ ही एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि किसान को फसल बोने से पहले इस बात का पता होना चाहिए कि उसको अपने उत्पादन की क्या कीमत मिलेगी। कीमत के अनुसार वह अपनी योजना बना सकता है। यदि गेहूं से उसको अधिक लाभ नहीं दिखाई देगा तो वह कोई और फसल उगा सकता है। चूंकि फसल की बुआई के समय कीमत में कमी करने की बात किसान से नहीं की गई, अतः फसल की कटाई के समय या उसके बाद कीमत में कमी करना उचित नहीं।

आर्थिक विषमता

साधारणतया गेहूं के मूल्य में कमी की मांग इसलिए की जाती है कि अधिक कीमत से केवल बड़े जमींदारों को ही लाभ होता है। छोटे किसानों को हरित क्रान्ति से कोई लाभ नहीं पहुंचा है और इसलिए ग्रामीण क्षेत्र में भी आर्थिक असमानता बहुत बढ़ गई है।

यह तो ठीक है कि छोटे किसान और जमींदार की आय में बहुत अन्तर है। परन्तु क्या गेहूं की कीमत में कमी करने से यह अन्तर कम हो जाएगा? उत्तर है, नहीं। दोनों वर्गों की आय में असमानता को समाप्त करने का केवल एक ही उपाय हैं—भूमि की सीमा निर्धारित करना। खाद्यान्नों की कीमत में कमी करने से इस सम्बन्ध में कोई लाभ नहीं हो सकता। हा, यदि भूमि सीमा निर्धारित न की गई तो यह कहना कि सरकार जमींदारों का पक्षपात करती है, उचित होगा।

स्थिति को देखते हुए कहा जा सकता है कि गेहूं का वसूली मूल्य उचित है और निकट भविष्य में उसमें कमी करना ठीक नहीं होगा। अभी किसान को और अधिक प्रोत्साहन की आवश्यकता है। परन्तु यदि खाद्यान्न उत्पादन और अधिक बढ़ता गया तो 1973-74 के वर्ष में परिस्थिति के अनुसार गेहूं की कीमत में कमी करने की बात सोची जा सकती है।

बच्चों में अच्छी आदतें डाली जाएं·····[पृष्ठ 21 का शेषांश]

प्रति जो प्रेम एवं आदर था वह साथ साथ रहने पर एकदम समाप्त हो गया। बच्चे जो पहले अपने ताऊ और ताई के प्रति प्रेम एवं आदर की भावना से ओत-प्रोत थे, अब उन्हें गालियां देते सुने जाते हैं। यह सब मात्र इसलिए हुआ कि बच्चों के सामने ही कलह होती है। दोनों पक्ष एक दूसरे को भला बुरा कहते हैं। यहां तक कि बच्चों को एक दूसरे से बोलने तक को मना कर देते हैं। अभी शायद ये बच्चे ताऊ-ताई के प्रति अनादर रखते हों किन्तु कुछ बड़े होकर अपने मां-बाप के प्रति अनास्था, अनादर रख सकते हैं।

अच्छा यही है कि बच्चों के सामने झगड़ा न पनपने दें, विवेक से काम लें, बच्चों से बुराइयां न करें। अच्छा है ऐसे समय में बच्चों को ऐसे स्थान से दूर हटाएं। बच्चों के सामने ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न न होने दें कि उन पर बुरा प्रभाव पड़े। बच्चों के अच्छे विकास का दायित्व आप पर हैं। बच्चे जहां आपकी सम्पत्ति हैं, वहां राष्ट्र की भी। प्रयत्न कीजिए कि बच्चों को ऐसी परिस्थितियां न छुएं जिससे उन पर बुरा प्रभाव पड़े। इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को कभी न भूलिए कि बच्चे नई-नई बातों को बहुत जल्दी पकड़ते हैं और आपके अनजाने में ही बुराइयों की ओर अग्रसर होते चले जाते हैं। आपको पता तब चलता है जब उनमें पनपती बुराईयां गहरी जड़ पकड़ जाती हैं और आप किंकर्तव्यविमूढ़ से अपने हाथों को मलने के अलावा किसी और स्थिति में नहीं पाते।

पंजाब में खेलों का नया उत्सव

सत्यपाल "भारत भूषण"

बागड़ियां (संगरूर) क्रीड़ा संघ का वार्षिक उत्सव हर वर्ष अक्तूबर या नवम्बर में मनाया जाता है। तीन दिन तक प्रातः नौ बजे से शाम पांच बजे तक खूब खेल चलते हैं। पंजाब के सभी प्रसिद्ध खिलाड़ी इसमें भाग लेते हैं। उनके रहने और भोजन का प्रबन्ध क्रीड़ा संघ स्वयं करता है। अतिथियों के बैठने के लिए कुर्सियों का प्रबन्ध किया जाता है। दर्शक मैदान के चारों ओर एक बहुत बड़ा चक्र बनाकर खिलाड़ियों के करतब देखते हैं। तालियां बजा-बजा कर प्रशंसा करते हैं। कई बार तो ऐसा प्रतीत होने लगता है कि आसमान ही तालियों से गूंजने लगा है। खिलाड़ियों तथा दर्शकों को उत्साहित करने के लिए क्रीड़ा संघ के मन्त्री सरदार जोरावर सिंह जी बड़े ही कलात्मक ढंग से लाउड स्पीकर पर टीका टिप्पणी करते जाते हैं और खिलाड़ियों का हौसला बढ़ाते हैं। रुपयों की वर्षा होने लगती है। तभी तो पंजाब से सभी प्रसिद्ध खिलाड़ी इस टूर्नामेंट में आते हैं। दर्शक बड़ी उत्सुकता से मैच देखते हैं। चारों ओर आदमी ही आदमी दिखाई देते हैं।

इस संघ के इतिहास में 1967 का वर्ष बड़े महत्व का था जब संघ ने आठवीं पंजाब कबड्डी चैम्पियनशिप बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न करवाई और जिसमें ग्रामवासियों ने पहली बार लड़कियों को कबड्डी का मैच खेलते देखा। 1968 में भी पारितोषिक वितरण उत्सव पर श्री अजीतसिंह जी चड्ढा, डिप्टी कमिश्नर, संगरूर आए। वह भी खेलों और प्रबन्ध को देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा "क्या ही अच्छा हो यदि हमारे देश के प्रत्येक ग्राम में ऐसे क्रीड़ा संघ बन जाएं। वे हर वर्ष खेल करवाएं, इनाम दें तथा खिलाड़ियों को उत्साहित करें। कितने दुःख की बात है कि पिछली बार हम ओलम्पिक खेलों में एक भी सोने का पदक नहीं जीत सके। छोटे-छोटे देशों ने भी कई-कई सोने के पदक जीते। केवल राजकीय प्रयत्नों से हमारे देश के खेल का स्तर कभी भी नहीं सुधर सकता। स्वयंसेवी संस्थाएं इस कार्य में बहुत योगदान कर सकती हैं। यदि हमने अपने खेलों के स्तर को ऊंचा न किया तो हम कभी भी ओलम्पिक खेलों में अपना स्थान नहीं बना सकेंगे। बागड़ियां क्रीड़ा संघ ने सारे देशवासियों के आगे एक आदर्श प्रस्तुत किया है। इसका अनुकरण प्रत्येक गांव को करना चाहिए।

टूर्नामेंट का प्रबन्ध

टूर्नामेंट से 1 महीने पहले क्रीड़ा संघ की सभा श्री नसीबचन्द की बैठक में बुलाई जाती है, टूर्नामेंट की तिथि नियुक्त की जाती है, विज्ञापन प्रकाशित कराए जाते हैं, कमेटियां बनाई जाती हैं। प्रत्येक कमेटी के सदस्यों की सूची तैयार की जाती है। उनके जुम्मे कामों की भी सूची तैयर की जाती है। जिस सामग्री की आवश्यकता होती है, कापी पर लिखली जाती है और मंगा ली जाती है।

इस संघ के लगभग चालीस सदस्य हैं। सभी दस-दस रुपये शुल्क देते हैं। लगभग चार सौ रुपया इकट्ठा हो जाता है। कुछ सदस्य पांच-पांच रुपये के भी हैं। उनकी भी संख्या 20-25 है। ग्राम पंचायत भी सहायता में योगदान करती है। जो धन इकट्ठा होता है उसे पारितोषिक वितरण में व्यय किया जाता है। जहांतक खिलाड़ियों के भोजन के प्रबन्ध का प्रश्न है गांव के अच्छे गुजारे वाले लोगों के घर जा-जा कर गेहूं इकट्ठा कर लिया जाता है। सभी लोग खुशी से गेहूं दान में देते हैं। गेहूं इकट्ठा करके पिसवा लिया जाता है। एक दिन जब खीर बनाने का प्रोग्राम होता है तो एक-एक या दो-दो किलो दूध घर-घर से इकट्ठा कर लिया जाता है। ग्राम की औरतें ही रोटियां बना देती हैं। कुछ औरतें तो इसे एक पुण्य कार्य समझ कर बड़े श्रद्धा भाव से काम करती हैं। टाट आदि स्कूल से मांग लिए जाते हैं। बहुत ही कम खर्च में, एक विशाल टूर्नामेंट हो जाता है। यदि राजकीय व्यय पर इतना ही विशाल टूर्नामेंट हो तो कई हजार रुपया व्यय करने होंगे।

पृष्ठभूमि

इस टूर्नामेंट का आरम्भ कैसे हुआ, यह बताना भी उचित ही होगा। 1959 में श्री सुखदेवसिंह, प्रीतमसिंह, जोगेन्द्र सिंह, उजागरसिंह आदि ने मैट्रिक पास की। वह स्वयं सभी अच्छे खिलाड़ी थे। स्कूलों के टूर्नामेंटों में भाग लेते थे इन्होंने विचार किया कि हम क्यों न अपने ग्राम में टूर्नामेंट का आयोजन करें। प्रत्येक ने दस-दस रुपये दिए। बस फिर क्या था, चालीस रुपये इकट्ठे हो गए। विज्ञापन प्रकाशित करवा दिया गया। यह विज्ञापन जब बड़े आदमियों, नौकरी पेशा व्यक्तियों ने पढ़ा तो सहयोग करना अपना परम कर्त्तव्य समझा। उन्होंने भी दस-दस रुपये दिए, काम किया, पथ प्रदर्शन किया, सहयोग किया। सारा टूर्नामेंट सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। इन्हीं उत्साही व्यक्तियों द्वारा टूर्नामेंट का आरम्भ किया गया। टूर्नामेंट अब हर वर्ष बड़ी शान के साथ किया जाता है। इससे बच्चों को अच्छे खिलाड़ी बनने की प्रेरणा मिलती है।

आप भी अपने ग्राम में ऐसा ही संघ बनाकर काम आरम्भ कर दें, सफलता आपको मिलेगी? क्या ही अच्छा हो यदि हम अपनी सीमाओं के रक्षक, चीन और पकिस्तान के शहीदों की याद में टूर्नामेंट आरम्भ करें। प्रत्येक देशवासी के मन में ऐसी ही कुर्बानी करने का संकल्प उत्पन्न कर सकें। हमारा खेलों का स्तर ऊंचा हो और हम भी ओलम्पिक खेलों में कई-कई सोने के पदक जीत सकें यह हमारी कामना है।

बच्चे हम पर आस लगाये हुए हैं

हां, हमें उनका ध्यान रखना चाहिये।

उनके लालन-पालन और देखभाल की ज़िम्मेदारी हमीं पर है। अच्छी ख़ुराक, अच्छे कपड़े और अच्छी शिक्षा पाना उनका हक़ है। बड़े होकर उन्हें अच्छा रोज़गार भी मिलना चाहिए। लेकिन अगर ज़्यादा बच्चें हों तो क्या हम उन्हें सभी ज़रूरी सुविधायें दे सकते हैं? नहीं। इसका एक ही जवाब है—परिवार छोटा होना चाहिये। परिवार जितना छोटा होगा, उतना ही हर बच्चे को लाड़-प्यार ज़्यादा मिल पायेगा।

मुफ़्त सलाह और सेवा के लिए परिवार कल्याण नियोजन केन्द्र में आइये।

davp 72/53

राजस्थान की पंचायत समितियों में स्वास्थ्य सेवा

कुसुम मेहता 'प्रियदर्शिनी'

राजस्थान की प्रायः समस्त 232 पंचायत समितियों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खुले हुए हैं। यह सेवा ग्रामीण स्वास्थ्य समस्याओं के हल के लिए आयोजित समग्र योजना के अन्तर्गत प्रारम्भ की गई है। इस सेवा द्वारा देहाती क्षेत्रों में न केवल रोगियों की चिकित्सा का कार्य किया जा रहा है किन्तु ऐसे उपाय भी अपनाए जा रहे हैं जिनसे रोग ही नहीं फैले। इस दृष्टि से यह सेवा बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रही है।

ग्रामीण लोगों का बहुत बड़ा शत्रु है बीमारी। अज्ञान, निर्धनता और पौष्टिक व सन्तुलित आहार के अभाव के कारण ये सीधे-सादे लोग सरलता से मलेरिया, यक्ष्मा, हैजा, पेचिस आदि कई साध्य असाध्य बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

हमारे देश में प्रतिवर्ष लगभग दस लाख लोग मलेरिया और पांच लाख लोग तपेदिक, हैजा, पेचिस, जीर्ण-ज्वर, लाहरू आदि रोगों से मर जाते हैं। बच्चों की तथा प्रसव के समय माताओं की मृत्यु भी काफी संख्या में होती है। देश के विभिन्न सामुदायिक विकास खण्डों में चल रही प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा योजना से मृत्यु दर काफी कम हो रही है और जनता में स्वास्थ्य सम्बन्धी ज्ञान व रुचि भी जाग्रत हो रही है।

सामुदायिक विकास और पंचायती राज का लक्ष्य है गांवों का सर्वांगीण विकास। यह लक्ष्य तभी सफल हो सकता है जब वह गांवों के लोगों को स्वस्थ व सबल बनाने में सहायक सिद्ध हो सके। अतः राज्य के सभी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र इस लक्ष्य प्राप्ति के लिए पूर्ण जागरूक एवं सतत प्रयत्नशील हैं। ये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र समुदाय के स्वास्थ्य को अच्छा बनाए रखने के लिए निम्न सुविधाएं सुलभ कराते हैं—

1. औषधीय सहायता ;
2. छूत की बीमारियों का नियन्त्रण ; इसके अन्तर्गत चेचक, मलेरिया, रोहें (ट्रकोमा) आदि छूत से लगने वाली बीमारियों को दूर करने एवं इनके प्रसार पर नियन्त्रण करने पर जोर दिया जाता है।
3. बाहरी सफाई, जिसमें स्वच्छ जल, जल की आपूर्ति और लोगों के मल-मूत्र निष्कासन व सफाई सम्मिलित हैं;
4. माताओं और शिशुओं की स्वास्थ्य सेवा, जिसमें परिवार नियोजन व परामर्श सम्मिलित हैं;
5. शालाओं के छात्रों के स्वास्थ्य की जांच;
6. जन स्वास्थ्य शिक्षा।

हर केन्द्र में एक डाक्टर, एक कम्पाउण्डर, एक महिला स्वास्थ्य निरीक्षक, तीन सहायक दाइयां होती हैं जिनमें से एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में और एक-एक उपकेन्द्रों में नियुक्ति की गई है। हर खण्ड के प्राथमिक केन्द्र में दो उपकेन्द्र होते हैं।

इन केन्द्रों-उपकेन्द्रों द्वारा बीमारियों को रोकने तथा स्वास्थ्य स्तर ऊंचा उठाने के लिए कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। तपेदिक से बचाने के लिए बी० सी० जी० के टीके तथा हैजे, चेचक, इन्फ्लूएन्जा आदि के लिए अलग अलग किस्म के इन्जैक्शन लगाए जाते हैं, जिससे कि पंचायत समिति क्षेत्रों में महामारी न फैले। शिशुओं को पोलियो-निरोधक इन्जैक्शन भी लगाए जाते हैं।

जनता को स्वच्छ जल प्राप्त हो, इसके लिए सीमित क्षेत्रों में कई कदम उठाए गए हैं। वर्तमान कुओं को नया बनाया जा रहा है ताकि स्वच्छ जल मिल सके। उनकी समय समय पर जांच की जाती है और उनमें कीटाणुनाशक औषधियां तथा पोटेशियम परमेगनेट आदि डाली जाती हैं। कुओं को पक्का बनाने की भी व्यवस्था की जा रही है। उनके पास के मलमूत्र के स्थानों को हटाया जाता है।

शालाओं के बच्चों को दूध, दलिया एवं आवश्यकतानुसार विटामिनों की गोलियां सुलभ कराने के लिए पंचायत समितियों, पंचायतों एवं क्षेत्र के धनी-मानी व्यक्तियों से सहयोग प्राप्त किया जाता है। सरकार के पोषाहार कार्यक्रम को सफल बनाने का यत्न भी किया जाता है।

गांवों के कुछ घरों में पाखाने और मूत्रालय हुआ करते हैं, शेष सभी लोग बाहर ही मलमूत्र का त्याग करते हैं। इस कारण जमीन दूषित हो जाती है और फिर मिट्टी के जरिए पानी भी। इसके सुधार के लिए स्थानीय श्रम और सामान की सहायता से कई कम लागत वाली किस्मों के शौचालय बनाए गए हैं।

गांव की सफाई के लिए जो अन्य कदम उठाए गए हैं, वे इस प्रकार हैं :—

1. गांव की सामान्य सफाई व स्वच्छता की व्यवस्था,
2. गन्दे पानी को सोखने के लिए सोखतों का निर्माण,
3. घरों में झरोखे या रोशनदान लगाना,
4. धुएं रहित चूल्हों का निर्माण,
5. पशुओं के लिए अलग अलग बाड़ों का प्रबन्ध, तथा
6. गांवों की गलियों की मरम्मत और नालियों का निर्माण, तथा
7. स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण शिविर एवं ग्रामसभाओं, ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों आदि की बैठकों में स्वास्थ्य व रोग निदान पर डाक्टरों की वार्ताएं।

प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के कर्मचारी समय समय पर शालाओं के बच्चों की स्वास्थ्य सम्बन्धी जांच करते हैं। राज्य की शल्य चिकित्सा इकाई के सहयोग से ग्रामों में ही परिवार नियोजन एवं शल्य चिकित्सा के शिविर आयोजित करते हैं। गर्भ निरोधक उपकरण वितरित किए जाते हैं और ग्रामीणों को परिवार नियोजन की उपयोगिता व महत्व समझाया जाता है तथा निःसन्तान दम्पत्तियों को उचित परामर्श दिया जाता है। ★

कृषि जानकारी के संचार में कृषि पत्रिकाओं का योग

बसन्त कुमार

हम आज विज्ञान के युग में रह रहे हैं। आज का सामान्य व्यक्ति 20 वर्ष पहले के सामान्य व्यक्ति की तुलना में अधिक जानकारी रखता है। आज हम अन्न उत्पादन में स्वावलम्बी बन चुके हैं। यह सब विज्ञान तथा वैज्ञानिक जानकारी के कारण सम्भव हुआ है। वैज्ञानिकों द्वारा खोजी गई इस प्रकार की सामग्री हमारे किसान भाइयों तक विभिन्न संचार साधनों द्वारा पहुंचाई जाती रही है। प्रसार माध्यमों में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस लेख में हम कृषि की पत्र-पत्रिकाओं के योगदान का उल्लेख करेंगे।

देश को आजादी मिलने के समय से ही भारत सरकार का यह प्रयास रहा कि औद्योगिक विकास के साथ साथ देश अन्न उत्पादन में भी तेजी से प्रगति करे और खाद्यान्नों में आत्मनिर्भर बने। इस बात में शक नहीं कि इस लक्ष्य की प्राप्ति अत्यन्त आवश्यक व महत्वपूर्ण है। काम मुश्किल भी था क्योंकि खेती के व्यवसाय में प्रयुक्त होने वाले सभी साधन बाबा आदम के जमाने के से थे। फिर भी सरकार ने फिलहाल उन्हीं साधनों का उपयोग कर स्थिति में सुधार लाने का बीड़ा उठाया। राष्ट्रीय प्रसार सेवा आरम्भ की गई ताकि उसके माध्यम से किसानों तक कुछ आवश्यक सूचनाएं व सहायता पहुंचाई जा सके। अधिकतम उपज प्राप्त करने वाले किसानों को प्रोत्साहित करने हेतु उन्हें नकद पुरस्कार देने तथा 'कृषि पण्डित' की उपाधि प्रदान करने की योजना आरम्भ की गई। खेती में उपज बढ़ाने, व्यवसाय में जागरुकता लाने तथा उसमें लगे लोगों को प्रोत्साहन देने की दिशा में यह पहला कदम था।

सरकार इस बात से भलीभांति परिचित थी कि किसान के साधन सीमित हैं। खेती सम्बन्धी वैज्ञानिक जानकारी जैसी उसके पास कोई चीज न के बराबर है। प्रशिक्षण का अभाव है। जब तक किसान को कृषि, शिक्षा, विकसित बीज का इस्तेमाल, सिंचित क्षेत्रों तथा सिंचाई साधनों में वृद्धि, उर्वरकों का उपयोग, पुरानी डिजायनों के अविकसित औजारों के स्थानों पर नए तथा शक्ति चालित औजार, कीट-व्याधियों की रोकथाम के लिए दवाओं का प्रयोग, प्रशिक्षण आदि के बारे में उचित सूचनाएं उपलब्ध नहीं होंगी तब तक स्थिति में सुधार लाना कठिन होगा। अतः इस समस्या को सुलझाने की दिशा में प्रभावी कदम उठाए गए। विभिन्न विषयों पर विदेशी विशेषज्ञों की सेवाएं ली गई। फलतः देश में ही उर्वरक बनाने के कारखानों की स्थापना, सिंचाई साधनों को बढ़ाने हेतु बांधों का निर्माण तथा बिजली चालित कुओं की संख्या में वृद्धि, उत्तम किस्म के बीज तैयार करने तथा वितरण के लिए कृषि अनुसन्धान केन्द्र व राष्ट्रीय बीज निगम की स्थापना की गई। इतना ही नहीं कृषि सम्बन्धी विभिन्न विषयों के उच्च स्तरीय अध्ययन, प्रशिक्षण तथा अनुसन्धान हेतु प्रत्येक राज्य में एक-एक कृषि विश्वविद्यालय की स्थापना की गई।

इन सभी इकाइयों की स्थापना तथा इनके कुशल परिणामों को खेती में अपनाने के फलस्वरूप हाल ही में उपज में जो वृद्धि हुई है उसे 'हरित क्रान्ति' की संज्ञा दी गई है। देश में कृषि के क्षेत्र में जबरदस्त परिवर्तन हुआ है। गेहूं की उपज में भी आशातीत वृद्धि हुई है। 1965-66 में जहां लगभग 1 करोड़ साढ़े छब्बीस लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल में लगभग 1 करोड़ 4 लाख टन उपज मिली थी, वहां 1970-71 में बढ़कर लगभग 166 लाख हैक्टेयर क्षेत्रफल में 2 करोड़ 93 हजार टन उपज मिली। यानी उपज में प्रतिवर्ष लगभग 20 प्रतिशत की वृद्धि हुई। ऐसे परिणाम धान, ज्वार, बाजरा, मक्का की फसलों में भी मिले है।

देश में वैज्ञानिक खोजों में भारी प्रगति के फलस्वरूप किसानों के दृष्टिकोण में भारी परिवर्तन हो गया है। उनकी रूढ़िवादिता समाप्त हुई है। बिना किसी हिचकिचाहट के नए परिणामों तथा तौर तरीकों को अपना लेने में तेजी आई है। उपज में प्रतिवर्ष वृद्धि होने लगी है। ऐसे वातावरण में कृषि पत्र-पत्रिकाओं को भी अपना कर्त्तव्य निभाना है। किसानों को उनके मार्गदर्शन हेतु उचित समय पर विस्तृत रूप से सही सूचनाएं प्राप्त कराने की जिम्मेदारी कृषि पत्र-पत्रिकाओं की है। निस्सन्देह उन बीस वर्षों में उनकी संख्या में भी आशातीत वृद्धि हुई है। फिर भी विकसित देशों की संख्या को तुलना में हमारे यहां इनकी संख्या कहीं कम है। इनकी संख्या को उत्तरोत्तर इतना बढ़ाना है कि दूर दराज के छोटे छोटे गांव के किसान को भी वे सरलता से प्राप्त हो सकें तथा उसकी कोई शिकायत बाकी न रहे।

भारत में कृषि पत्रकारिता का इतिहास नया ही है। इसका आरम्भ केवल पिछली दशाब्दी से कुछ पहले हुआ है। देश में अधिकतर कृषि पत्र पत्रिकाएं अंग्रेजी भाषा में ही प्रकाशित की जाती रही हैं जिनसे केवल बड़े तथा मध्यम दर्जे के अंग्रेजी पढ़े लिखे किसान ही लाभान्वित होते हैं। अंग्रेजी की जानकारी न रखने वाले तथा छोटे किसानों तक इस प्रकार के उपयोगी

समाचार, जो उन्हीं की भाषा में पहुंचाने चाहिए, नहीं पहुंच पाते। अंग्रेजी में प्रकाशित होने वाली ऐसी पत्रिकाओं को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। एक तो वे, जो केवल वैज्ञानिक खोजों के परिणामों को ही प्रकाशित करती हैं। जिनके समझने में अंग्रेजी पढ़े लिखे किसानों को भी कुछ कठिनाई अनुभव होती है। इस प्रकार के प्रकाशन अरुचिकर तथा काफी कीमती भी होते हैं। अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग इन्हें पढ़कर कुछ-कुछ निष्कर्ष निकाल लेते हैं और उन्हें व्यावहारिक कृषि में उपयोग करते हैं। दूसरा वह वर्ग है जो वैज्ञानिक परिणामों को सरल भाषा में प्रकाशित करते हैं तथा अधिक खर्चीले भी नहीं होते। परन्तु बिना अंग्रेजी पढ़े-लिखे किसानों को तो दोनों ही प्रकार की पत्रिकाओं से किसी प्रकार का लाभ नहीं पहुंच पाता। दुर्भाग्यवश हमारे देश में 62 प्रतिशत किसान हैं जिनकी शिक्षा न के बराबर है। अतः वांछनीय यह है कि उपरोक्त आशय के अधिकतर पत्र-पत्रिकाओं को क्षेत्रीय भाषा तथा सरल शैली में प्रकाशित किया जाए ताकि उनका लाभ सामान्य लोग भी उठा सकें।

भारत में विभिन्न क्षेत्रों से प्रकाशित होने वाली कृषि पत्र-पत्रिकाओं की संख्या लगभग 260 है। इनमें त्रैमासिक, द्विमासिक, मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक तथा दैनिक पत्र-पत्रिकाएं सम्मिलित हैं। इनमें से अधिकांश अंग्रेजी में प्रकाशित होती हैं। अंग्रेजी में प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं में से लगभग आधे से भी अधिक केवल वैज्ञानिक अनुसन्धान के परिणामों का प्रकाशन करती हैं। विभिन्न क्षेत्रों से प्रकाशित होने वाले पत्र-पत्रिकाओं की संख्या इस प्रकार है :—

आन्ध्र प्रदेश 12, असम 2, बिहार 17, गुजरात 9, हरियाणा 6, जम्मू व काश्मीर 1, हिमाचल प्रदेश 3, केरल 19, मध्य प्रदेश 7, महाराष्ट्र 21, मणिपुर 11, मैसूर 13, दिल्ली 65, उड़ीसा 11, पंजाब 10, राजस्थान 18, तमिलनाडु 12, उत्तर प्रदेश 18, तथा पश्चिम बंगाल 18। दिल्ली में प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाओं की संख्या लगभग 50 है।

भाषा तथा शैली

पत्र-पत्रिकाओं का उद्देश्य उनमें प्रकाशित लेख, कहानी, फीचर, रिपोर्ट आदि के रूप में एक व्यक्ति के विचार तथा विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को पाठकों और अन्य व्यक्तियों को सरल तथा रोचक भाषा में पहुंचाना है। सामान्य अथवा तकनीकी पत्रकारिता की अपेक्षा कृषि-पत्रकारिता का कार्य कुछ कठिन है। कारण इसके अन्तर्गत वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दों की अधिकता रहती है। ऐसे पत्रकारों को, जिन्होंने विज्ञान की शिक्षा ग्रहण नहीं की है, यह कार्य कुछ अरुचिकर लगता है। कृषि तथा विज्ञान में गहरा सम्बन्ध होने के नाते अनेक कृषि-विषयों को समझाने में चित्रों, ग्राफों, सारणियों तथा अन्य प्रकार की आकृतियों का सहारा लेना पड़ता है ताकि विषय विशेष को एक अशिक्षित व्यक्ति भी सरलता से समझ सके और उसे उस पर अमल कर सकने में कठिनाई न हो।

आमतौर से लोग कृषि पत्रकारिता को एक नीरस विषय समझते हैं। कारण, उसे अधिक रोचक भाषा में लिखने का प्रयास नहीं किया जाता। इसलिए आवश्यक यह है कि किसी मुद्दे विशेष पर जितनी बात कही जाए वह इतनी ही संक्षेप व सरल तथा रोचक भाषा में हो कि उसे पढ़ने में पाठक रुचि भी ले तथा उसका समय भी नष्ट न हो। लेखों में केवल वे ही तकनीकी शब्द इस्तेमाल किए जाएं जो उस स्थान पर सही बैठते हों। कोशिश इस बात की रहे कि अधिक से अधिक स्थानीय नामों का उपयोग हो तथा वे आवश्यकता के अनुसार ही प्रयोग किए जाएं। लेखों में चित्रों की समुचित संख्या रखनी आवश्यक है, चित्र इतने स्पष्ट हों कि पाठक के मन में उनके विषय में पूरी जानकारी हासिल करने की जिज्ञासा उत्पन्न हो तथा समूचे लेख को पढ़ने व उसके अनुसार अमल करने की रुचि उत्पन्न हो जाए। कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि अनुसंधान केन्द्रों के क्या कार्य कलाप हैं, वहां विभिन्न कृषि विधियां तथा प्रक्रियाएं कैसे पूरी होती हैं, उनके सम्बन्ध में जो जानकारी दी जाय उनमें चित्रों की प्रधानता होनी चाहिए। भूमि तथा मिट्टी कैसी हो, फसल कौन सी बोई जाए, उत्तम किस्में कौन सी हैं, खाद तथा उर्वरक की अमुक मात्रा का क्या प्रभाव होता है, अधिक सिंचाई अथवा कम सिंचाई से फसल पर क्या प्रभाव पड़ता है, विभिन्न कीटनाशी दवाओं का फसल के ऊपर कैसा प्रभाव पड़ा है आदि क्रियाओं को तुलनात्मक ढंग से दिखाना आवश्यक है। प्रत्येक क्रिया का वर्णन प्रभावी तथा स्पष्ट होना जरूरी है। पत्रिका को इतनी रोचक बनाना चाहिए कि पाठकों में इस प्रकार के साहित्य की मांग बढ़े।

कृषि पत्रकारों को गांवों में आने जाने, किसानों से मिलने व उनसे जानकारी हासिल करने की समुचित सुविधाएं मिलनी चाहिए, क्योंकि साधनों की कमी के कारण कृषि क्षेत्रों में हुई प्रगति तथा कमियों का वास्तविक चित्रण कृषि पत्रों में उतने प्रभावकारी और सही ढंग से नहीं हो पाता जितना कि होना चाहिए।

देश में कृषि पत्र-पत्रिकाओं का भविष्य उज्जवल है, क्योंकि भविष्य में ज्यों-ज्यों ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का प्रसार एवं आवागमन के साधन बढ़ेंगे ऐसे पत्रों के प्रसार में भी वृद्धि होगी।

संसद में विकास चर्चा

[जून 1972 के प्रथम सप्ताह में समाप्त होने वाले संसद के दोनों सदनों के सत्रों में सामुदायिक विकास तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के सम्बन्ध में काफी चर्चा हुई। कुछ सदस्यों ने राष्ट्रीय विस्तार सेवा तथा ग्राम पंचायतों के कर्मचारियों (ग्रामसेवक तथा ग्रामसेविका) की सेवा स्थिति की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित कराया। इसके अलावा, पंचायती राज का विकास, उसके चुनाव तथा परिषदों के गठन पर भी विचार किया गया।]

भारत के विभिन्न प्रदेशों में फैले ग्रामीण अंचलों में बढ़ रही बेकारी की समस्या की ओर केन्द्रीय सरकार का सामुदायिक विकास और सहकारिता विभाग पहले से ही ध्यान देता आ रहा है। इस समस्या के समाधान के लिए ग्रामीण रोजगार योजना बनाई गई, जिसके सम्बन्ध में फरवरी 1972 में दिल्ली में एक विचार गोष्ठी का भी आयोजन किया गया था। लोकसभा के कई सदस्य (सर्वश्री मूलचन्द डागा, जी० वाई० कृष्णन, सी० के० चन्द्रप्पन, मार्तण्डसिंह आदि) इस दिशा में हुई प्रगति और कार्यान्वयन की स्थिति की जानकारी प्राप्त करने के इच्छुक थे। केन्द्रीय राज्यमन्त्री प्रो० शेरसिंह ने अपने उत्तर में बताया कि ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की समस्या हल करने के लिए रोजगार की त्वरित योजना चलाई जा रही है। उन्होंने यह भी बताया कि ग्राम रोजगार की त्वरित योजना का कार्यान्वयन इस मूल उद्देश्य से प्रेरित होकर आरम्भ किया गया है कि उन श्रमिकों को, जो ऐसे परिवारों में से हैं जिनका कोई भी वयस्क सदस्य रोजगार में नहीं है या जो वर्ष में अधिकांश समय बेरोजगार रहते हैं, या जिन्हें आंशिक रोजगार मिलता है उचित रूप में रोजगार सुलभ किया जा सके। इस योजना के अन्तर्गत देश के सभी जिलों में ऐसी परियोजनाएं कार्यान्वित की जानी हैं जो मुख्यतः श्रमप्रधान हैं। इसके लिए यह निश्चय किया गया है कि केन्द्रीय सरकार योजना के आधीन प्रति जिला 12.50 लाख रुपए की दर से धनराशि का आवण्टन करे, परन्तु जिलों में धनराशि का पुनः आवण्टन राज्य सरकारों की मर्जी पर छोड़ दिया जाए।

ग्राम रोजगार की त्वरित योजना के सम्बन्ध में हुई विचार गोष्ठी के द्वारा कई सिफारिशें की गईं जिनमें मुख्य रूप से ग्राम पंचायतों तथा स्थानीय संस्थाओं को इस योजना की सफलता के लिए सक्रिय सहयोग उपलब्ध कराने का प्रस्ताव हुआ। यह भी कहा गया कि रोजगार के लिए स्थानीय योजनाएं बनाने का कार्य, पंचायती राज संस्थाओं अथवा जिला विकास परिषदों के परामर्श से किया जाना चाहिए। रोजगार के लिए श्रमिकों का चयन करने का भार भी इन्हीं संस्थाओं पर रहेगा। इस सम्बन्ध में चयन केवल उन्हीं श्रमिकों तक ही सीमित किया जाना चाहिए जो योजना के अन्तर्गत पात्र पाए जाते हैं अर्थात प्रत्येक भूमिहीन परिवार के बेरोजगार वयस्क सदस्यों में से केवल एक वयस्क सदस्य ही चुना जाना चाहिए। चयन के कार्य को सुचारु रूप से पूरा करने के लिए इसे खण्ड विकास अधिकारी और समाहर्त्ता के सामान्य पर्यवेक्षण में रखा जाएगा।

यह रोजगार योजना 1971-72 में 50 करोड़ रुपए के परिव्यय से आरम्भ की गई थी। अब इसे चतुर्थ योजना के शेष दो वर्षों के लिए केन्द्रीय योजना के रूप में शामिल किया गया है तथा इसके लिए प्रतिवर्ष 50 करोड़ रुपए का परिव्यय है।

लोकसभा के सदस्य श्री पम्पन गोंडा के द्वारा सामुदायिक विकास और पंचायतीराज सम्बन्धी दो परिषदों को एक में मिलाने का कारण पूछे जाने पर मन्त्री महोदय ने बताया कि सामुदायिक विकास और पंचायतीराज कार्यक्रमों के उद्देश्यों को बढ़ावा देने हेतु उपयुक्त नीतियों के बारे में सरकार को सलाह देने के लिए सामुदायिक विकास तथा पंचायतीराज के निमित्त दो सलाहकार परिषदें, एक सामुदायिक विकास सम्बन्धी तथा दूसरी पंचायतराज सम्बन्धी, क्रमशः दिसम्बर, 1968 तथा अप्रैल, 1969 में गठित की गई थीं। चूंकि सामुदायिक विकास तथा पंचायतीराज के उद्देश्य आपस में निकट हैं अतः दोनों परिषदों ने एक मंच तथा अपने विलयन की आवश्यकता पर बल दिया था। तदनुसार सरकार ने दिसम्बर 1971 में विद्यमान दोनों परिषदों को परस्पर मिला दिया है और सामुदायिक

शेष पृष्ठ 36 पर]

कहानी

झूठ और सच

महेशचन्द्र जोशी

किशन ने दो तीन बार दरवाजा खटखटाया और किसी के आने से पूर्व ही दरवाजा पूरा खोलकर बेझिझक सीधा अन्दर घुस गया। वह कुछ कदम अभी भीतर की ओर चल ही पाया होगा कि उसने सामने से शम्भू को ऊंघता हुआ सा आता देखा।

"अरे शम्भू तू!" आश्चर्य भरे स्वर में किशन बोला—"क्या हालचाल हैं तेरे?"

"आ प्यारे किशन।" बाहें फैलाता हुआ शम्भू बोला—"कई वर्षों बाद आया है।"

"मैं कई वर्षों बाद आ तो गया, लेकिन तू···" गले मिलते ही किशन के शेष शब्द, उमड़ते अश्रुसागर में डूब गए।

"मेरी बात छोड़। मैं सही सलामत तेरे सामने हूं यही बहुत समझ।"

"ऐसा क्या पहाड़ टूट पड़ा है तेरे ऊपर जो ऐसी उखड़ी बातें कर रहा है?"

"पूछ मत। आ चल बैठ तो सही।"

"मत बता। भाभी कहां है? उससे पूछूंगा।"

"वह तो खटिया पर पड़ी है। दो तीन वर्षों से उसकी सेहत बिगड़ी जा रही है।"

"ऐसी क्या बात हो गई? परवाह न की होगी तूने उसकी। चल बता भाभी कहां है?"

"आ चल।" कहकर शम्भू एक कमरे की ओर बढ़ गया और उसके पीछे पीछे किशन। कमरे में पहुंचते ही जब किशन की दृष्टि एक खटिया पर पड़े एक कंकाल से शरीर पड़ी तो कुछ पलों के लिए उसे यह विश्वास करना कठिन हो गया कि वह और कोई नहीं उसकी भाभी है। उसके बचपन के घनिष्ठ मित्र की पत्नी।

"भाभी।" किशन भीगे स्वर में बोला।

"कौन?" भाभी की रूखी-रूखी आंखें किशन की ओर घूमी।

"मैं···मैं किशन···।" कहते-कहते किशन की अश्रुधाराएं फूट पड़ी।

"यह क्या पागलपन है किशन?" कहकर शम्भू ने उसका हाथ पकड़ा और दूसरे कमरे की ओर ले गया।

दूसरे कमरे में पहुंचकर एक टूटी कुर्सी की ओर इशारा करते हुए शम्भू बोला—"बैठ किशन। सुना अपने हालचाल। बाल-बच्चे तो मजे में हैं?"

"हां हम चारों आनन्द से हैं।" कहता हुआ किशन धीरे से कुर्सी पर बैठ गया।

"चारों। क्या मतलब? क्या अभी तक जनाब की बगिया में दो ही फूल उगे हुए हैं।"

"जी हां। इस बगिया में दो ही खिले फूल बेहतर हैं।"

"कमाल कर दिया तूने। यहां तो हर वर्ष एक नया माडल तैयार करते हैं।"

"तो क्या तूने सात बच्चे पैदा कर दिए?"

"कर क्या दिए, हो गए।"

"हूं। समझा। तभी भाभी की यह दुर्दशा हुई है। यह हरा-भरा घर रेगिस्तान सा रूखा सूखा लग रहा है।"

"नहीं यार। बच्चों के पीछे ही तो घर की रौनक है। यदि बच्चे···।"

शम्भू अभी पूरी बात कह भी न कह पाया था कि घर के एक कोने से बच्चों के झगड़ने का शोर सुनाई दिया। देखते-देखते दो बच्चे एक दूसरे के पीछे दौड़ते हुए उस कमरे में आ घुसे, जहां शम्भू और किशन बैठे थे।

"क्या बात है?" उन दोनों बच्चों की ओर देखता हुआ शम्भू गरजा।

"काका। काका। छुनिया मेली लोती छीन रही है।" नन्हा बोला।

"क्यों री छुनियां तू नन्हा की रोटी क्यों छीन रही है?"

"काका मुझे भूख लग रही है।"

"तू दूसरी रोटी ले ले।"

"औल लोती है ही नहीं।"

"बनवा ले।"

"आता भी नहीं है।"

"जाओ कम्बख्तो मरो। पहली तारीख में अभी दो दिन घटते हैं।"

कहते-कहते शम्भू ने दोनों हाथों से माथा पकड़ कर गर्दन झुका ली। किशन को अचानक कुछ याद आया। उसने कन्धे पर लटके बैग में झांका और एक बिस्कुट का पैकेट निकाल कर बच्चों के हाथ में थमा दिया।

बच्चे खुशी-खुशी उछलते हुए बाहर भाग गए। कुछ देर की खामोशी को तोड़ते हुए किशन बोला—"अब क्या इरादा है तेरा। बच्चों से मन भरा या नहीं?"

"मेरा मन भरने से क्या होता है,

भगवान का मन जब तक न भरे।"

"क्या मतलब ?"

"इसमें मेरा क्या बस चल सकता है। भगवान को जितने बच्चे देने होंगे उतने तो वह देगा ही।"

"अरे पगले, लोग चांद तक पहुंच कर उससे भी आगे जाने की सोच रहे हैं और तू अभी जमीन पर ही कीड़े की तरह रेंग रहा है।"

"फिर क्या करूं मैं ?"

"उठ। आंख खोल। देख दुनिया कितनी तेजी से बदलती जा रही है ? केवल भगवान और भाग्य के भरोसे बैठ कर दुनिया के साथ नहीं चला जा सकता। समय के अनुसार कार्य करना आवश्यक है।"

"मैं क्या करूं ? क्या न करूं ? मेरी कुछ समझ में नहीं आता दोस्त। जैसे रोता हुआ दुनिया में आया हूं ऐसे ही रोता हुआ एक दिन यहां से चला जाऊंगा।"

"ऐसे निराश होने से काम नहीं चलता शम्भू। अब तक जो अधिक बच्चे पैदा करके तूने गलती कर ली उसका दुष्परिणाम तो तुझे भोगना ही पड़ेगा। आगे से सौगन्ध ले ले कि अब यह गलती न करेगा।"

"सौगन्ध लेने से फायदा क्या ? बच्चे तो भगवान के दिए तोहफे है। इन्हें लेने से कैसे इन्कार किया जा सकता है ?"

"किसी ने कहा है कि अन्धे के सामने रोना अपने नैन खोना है। पगले जरा सोच तो सही कि भगवान तुझे ही क्यों तोहफे देता है, औरों को क्यों नहीं देता ? तुझसे एक वर्ष पूर्व मेरी शादी हुई थी, भगवान ने मुझे इतने बच्चे तोहफे स्वरूप क्यों नहीं दिए ?"

"भगवान की माया को मैं कैसे समझाऊं।"

"देख कान खोल कर सुन कि अपनी गलतियों को भगवान पर थोपने से, उनके दुष्परिणामों से नहीं बचा जा सकता है। भगवान पर ही क्या किसी पर भी अपनी गलती नहीं थोपनी चाहिए।"

"ठीक है लेकिन कुदरत के नियमों के खिलाफ भी तो नहीं जाना चाहिए। जब से परिवार नियोजन की तूती बोलने लगी है, तब से लोगों ने कुदरत को समझा ही नहीं है। जितनी इच्छा होती है उतने ही बच्चे पैदा करते हैं। लगता है कि तूने भी परिवार नियोजन का सहारा लिया है।"

"बिलकुल। परिवार नियोजन के आधुनिक साधनों ने तो लाखों घर उजड़ने से बचा दिए। सरकार कोई यों ही करोड़ों रुपया इस पर खर्च थोड़े ही कर रही है। पर तुझ जैसे लोग कूप मण्डूक की तरह अब भी नही समझ रहे कि हमारी क्या स्थति है ? हमें क्या करना है ? कभी भाग्य का झूठा सहारा ले लेते हो तो कभी भगवान का और कभी कुदरत का। कुदरत के नियमों को भी कभी समझने का प्रयत्न किया तूने ?"

"नाराज न हो। कुदरत कभी यह नहीं कहती कि कुत्ते बिल्लियों की तरह बच्चे पैदा करते जाओ और फिर उन्हें लावारिसों की तरह गलियों में छोड़ते जाओ।"

"मैं तो यह सब कुछ भगवान की मर्जी मानता हूं ? भले ही तू बुरा मान।"

"देख। मैं भगवान के खिलाफ नहीं हूं। नित्य नियम से उसकी पूजा करता हूं। पर मैं तुझ जैसे उन सब लोगों के खिलाफ हूं जो अपना दोष उस भगवान के माथे पर देते हैं। अच्छा बता भगवान को तू क्या समझता है ?"

"क्या समझूं। वो हम सबको पैदा करने वाला है। हमारे दुःख सुख को सुनने वाला है।'

"याने वह हम सबका पिता है।"

'बेशक।"

"ठीक है। तो अच्छा यह बता कि क्या एक पिता एक बच्चे को ज्यादा व दूसरे बच्चे को कम प्यार करता है ? आखिर तू भी तो सात बच्चों का बाप है।"

"बिल्कुल नहीं। मैं अपने सब बच्चों को समान ही खुश देखना चाहता हूं।"

"एक बात और बता ?"

"बोल।"

"यदि तेरे इतने बच्चों में से एक या दो या अधिक बच्चे नालायक निकल जाएं। तुझे केवल सुख देने का ही साधन समझें। अपना कोई कर्त्तव्य न समझें। मनमानी करें। फिर अपनी बर्बादी का दोष तुझ पर मढ़ दें, तो तुझे कैसा लगे ?"

"बहुत बुरा। उन नालायकों पर क्रोध ही आए।"

"तो फिर उस परमात्मा पर तरस क्यों नहीं खाता। अपनी गल्तियों को क्यों उसके माथे मढ़ता है ? जरा गौर कर उसने हम सबको बुद्धि नाम की कितनी अच्छी कसौटी दे रखी है, जिसमें हर सच व हर झूठ को घिसने से हर चीज, हर बात की असलियत का ज्ञान हो जाता है। जरा भगवान के दिए उस सच्चे तोहफे को काम में लाकर देख। फिर तुझे पता लगे कि तू स्वयं के लिए अपने परिवार के लिए, समाज के लिए, देश के लिए और संसार के लिए कितना लाभदायक सिद्ध होता है।"

"अरे बच्चों की चिन्ता में ही दिन गुजर जाता हैं। क्या सोचूं ?"

"बच्चों पर रोक लगा, जिससे तू तो उन्नति की ओर अग्रसर होगा ही देश भी उन्नत होगा।"

"मेरे बच्चे देश का क्या बिगाड़ रहे हैं ?"

"क्या अधिक जनसंख्या देश के लिए घातक नहीं है ? मोटी बात तो यही है कि जब हम उन्नत नहीं होंगे तो देश कैसे उन्नत होगा।"

"ठीक कहते हो दोस्त जब जमीन सीमित है, साधन सीमित है तो यह बढ़ती जनसंख्या असीमित क्यों रहे ?"

"आखिर तुम मेरे कहने का आशय समझ ही गए। भगवान का लाख-लाख शुक्रिया। अच्छा चलूं और विश्वास रखूं कि तुम परिवार नियोजन का पूरा-पूरा

शेष पृष्ठ 36 पर]

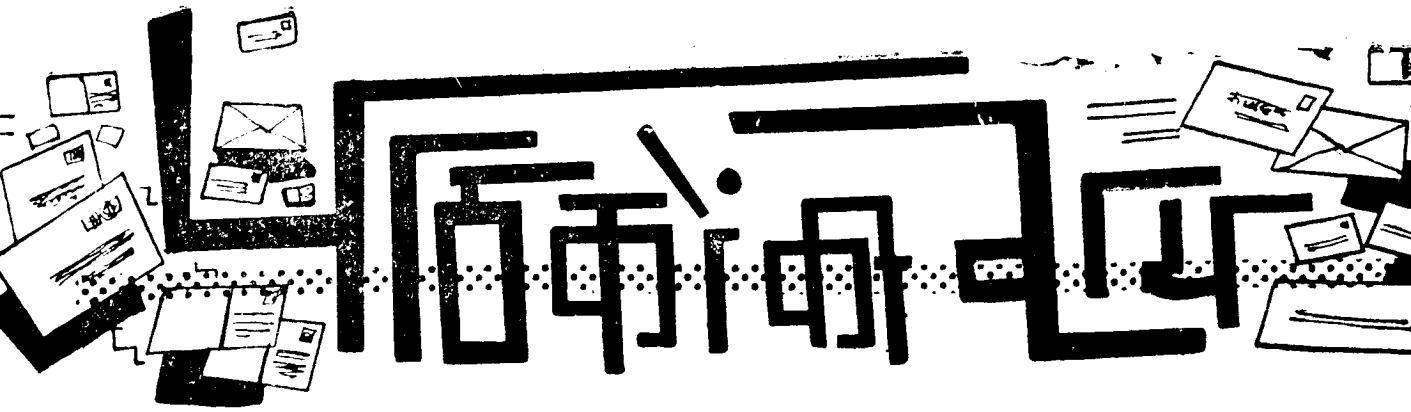

कृषि विकास के लिए कृषि कर आवश्यक

अभी तक कृषि उद्योग करों से मुक्त रखा गया था पर अब देश के सामने अनेक ऐसी उग्र आर्थिक समस्याएं आ पड़ी हैं कि सरकार को कृषि उद्योग से भी कुछ अपेक्षा करनी है। पर कुछ लोग इसके विरुद्ध हैं और वे 'राष्ट्रीय सेंपिल सर्वे' तथा एकाधिकार जांच आयोग की आड़ लेकर यह कहने लगे हैं कि 82 प्रतिशत ग्रामीणों की आय इतनी कम है कि वे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति एक रुपया भी खर्च नहीं कर सकते तथा एक करोड़ से भी अधिक ग्रामीण किसान ऐसे हैं जिनकी आय 27 पैसा प्रतिदिन से भी कम है तथा अधिकांश किसानों के पास 5 एकड़ से भी कम भूमि है। प्रत्येक पांच ग्रामीण परिवारों में से एक के पास बिलकुल भी भूमि नहीं है।

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि भारत जैसे अर्द्धविकसित देश में कर भार की सीमा दुनिया के विकसित देशों की तुलना में अधिक नहीं तो कम भी नहीं है। तब कर माध्यम से साधन संग्रह करते समय इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि क्या इसके लिए केवल शहरों तक ही सीमित रहा जाए या देहातों से भी इसकी अपेक्षा की जाए। देश के सात करोड़ ग्रमीण परिवारों में से डेढ़ करोड़ खेतिहर मजदूर व उन चवालीस प्रतिशत परिवारों, जिनके पास एक एकड़ से भी कम भूमि है, की आड़ में कृषि कराधान को न्यायोचित न ठहराना तर्क युक्त नहीं क्योंकि 25 प्रतिशत ग्रामीण ऐसे भी हैं जो शहरी धनिकों से आगे नहीं तो पीछे भी नहीं। ऐसे ग्रामीणों पर करारोपण अनुचित नहीं। कृषि कराधान के विपक्ष में यह आवाज भी उठाई जा सकती है कि देश के 5 लाख 60 हजार गांवों में फैले 6 करोड़ खेतों में आधुनिकीकरण की बात तो दूर रही, पर्याप्त पानी भी उपलब्ध नहीं। तब कृषि उद्योग से क्यों और कैसे कराधान की अपेक्षा की जाए? यह तो केवल सिक्के का एक ही पहलू है। ऐसा सोचने व कहने वालों को यह नहीं भुला देना चाहिए कि दिन पर दिन बढ़ता हुआ कृषि विकास व्यय

जगदीशचन्द्र पन्त

इस बात का प्रमाण है कि सरकार इस उद्योग के प्रति उदासीन नहीं और यह भी सत्य है कि गैर कृषि क्षेत्र की लगभग 17 हजार करोड़ वार्षिक आमदनी में से 786 करोड़ रुपया आय कर से प्राप्त हो रहा है और 15 हजार करोड़ की आमदनी वाला कृषि क्षेत्र आय कर के तौर पर केवल 11 करोड़ रुपए की अदायगी करता है। तब इस असमानता को समान करने के लिए कृषि कर्म पर आय कर लगाना आवश्यक हो जाता है।

जहां तक शहरी क्षेत्रों का प्रश्न है पूर्णतया यह कहना तो कठिन ही है कि ये लोग ग्रामीणों की अपेक्षा अच्छा जीवन बिता रहे हैं जो भी हो अपनी सामर्थ्य के अनुसार इनसे कुछ न कुछ प्राप्त हो ही रहा है। जहां तक उद्योगपतियों का प्रश्न है उनसे करों के रूप में प्राप्त तो किया ही जा रहा है और अब एकाएक साधन संग्रह की होड़ में ऐसा करना भी न्यायसंगत नहीं कि सोने का अंडा देने वाली मुर्गी से सब अंडे एक ही साथ प्राप्त कर लिए जाएं। पर देहातों की ओर देखने से पूर्व इतना अवश्य करना होगा कि अनुमानित 14 अरब रुपए की धनराशी जो काले धन के रूप में शहरी लोगों ने तहखानों में दबा ली है उसे भी निकाल बाहर करना होगा, ताकि किसी को यह कहने का अवसर न मिल सके कि सरकार एक पक्ष की उपेक्षा कर दूसरे को पनाह देने जा रही है।

काले धन की समस्या को सरकार नजर अंदाज तो नहीं कर सकती पर यह रोग कैंसर से भी भयंकर है जिसका निदान सरकार बिना जन सहयोग के कर भी नहीं सकती। तब सरकारी प्रयत्नों के साथ ही साथ गैरसरकारी प्रयत्नों का सहयोग भी इसके लिए अपेक्षित होगा।

सरकार राज कमेटी की बेसब्री से प्रतीक्षा तो कर ही रही होगी और यह भी सुनिश्चित है कि छुटभइयों को इसके परिणामों से निराशा नहीं होनी चाहिए। हां बड़े भाई अवश्य परेशान होंगे। उन्हें भी भविष्य में घटित परिणामों को यह सोचकर आत्मसात् कर लेना होगा कि 'नया कर परेशान, पुराना कर आसान' होता है। ●

सच्चे इन्सान बनो—लेखक : फादरवालेज; अनुवादक : श्री नित्यानन्द पटेल वेदालंकार; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली; पृष्ठ संख्या : 142; मूल्य : चार रुपया।

इस पुस्तक में बचपन से लेकर मरणपर्यन्त व्यक्ति के जीवन में व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया किस तरह चालू रहनी चाहिए, इस पर फादरवालेज ने गहराई से प्रकाश डाला है। मानव जीवन का उनका अध्ययन बड़ा गहन है। उनकी शैली बड़ी रोचक है। उन्होंने यह पुस्तक भारतीय संस्कृति के मर्म को आत्मसात् करके लिखी है और पाठक को अपने विचार देने की जो शैली अपनाई है उससे कोई भी पाठक प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। पुस्तक में लेखक ने यह दर्शाया है कि हर कोई व्यक्ति तेजस्वी व्यक्तित्व प्राप्त कर सकता है। लेखक की नजर में व्यक्तित्व बड़ी चीज है जिसके द्वारा मनुष्य, मनुष्य बनता है। उनका कथन है कि मनुष्य के भविष्य का निर्माण केवल बुद्धि द्वारा नहीं, उसके समूचे व्यक्तित्व द्वारा होता है। लेखक की नजर में व्यक्ति की बुद्धि, उसकी स्मरण शक्ति, उसका शरीर, उसका दिखावा उसकी परिस्थिति और उसका संयोग चाहे कैसे भी हों, वह एक उज्ज्वल व्यक्तित्व प्राप्त कर सकता है। किन्तु बुद्धि के विकास के बिना व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं। इसीलिए वे कहते हैं कि सुघड़ व्यक्तित्व प्राप्त करना है तो विवेक शक्ति विकसित करो तथा विचार पर काबू रखो।

विचार ही दुनिया का संचालन करते हैं। मनुष्य अपने विचारों तथा वृत्तियों को विशिष्ट दिशा में मोड़ कर ही कुशल व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता है। जो मनुष्य अपनी वृत्तियों के अधीन रहता है वह इन्द्रियों के इशारों पर नाचता है और वह ठीक मनुष्य नहीं।

लेखक की दृष्टि में व्यक्ति उखाड़ पछाड़, आशा-निराशा, प्रकाश अन्धकार के भंवर जाल में घूमता रहता है पर अपने दृढ़ मनोबल के सहारे इस भंवर जाल से निकल कर सफलता की देहरी पर आ खड़ा होता है और फिर सफलता के मृदु स्पर्श से उसके निराशा और अविश्वास के सारे घाव भर जाते हैं। व्यक्ति के चरित्र निर्माण के लिए जिन सद्गुणों और वृत्तियों की जरूरत होती है उन सभी पर पुस्तक में प्रकाश डाला गया है। यह पुस्तक छात्रों के लिए विशेष उपयोगी है और यह हर बच्चे को सच्चा इन्सान बनाने की दृष्टि से लिखी गई है। चारित्रिक दृष्टि से पुस्तक आज के अन्धकारमय जीवन में प्रकाश स्तम्भ के समान है। पुस्तक की छपाई सुन्दर है। प्रूफ की अशुद्धियां भी नगण्य हैं। पुस्तक पठनीय है।

कुमारी पुष्पलता

वैज्ञानिक मालिश—लेखक : सत्यपाल; प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली; पृष्ठ संख्या 159; मूल्य चार रुपया।

व्यक्ति के स्वास्थ्य के लिए मालिश की क्या उपयोगिता है इस विषय पर इस पुस्तक में अच्छा प्रकाश डाला गया है। मालिश का सभी देशों में प्रचलन रहा है और है। लेखक मालिश के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए लिखता है कि ईसा से 3000 वर्ष पूर्व चीन में मालिश की बहुत महत्ता थी तथा यूनान, मिश्र, रोम, तुर्की, फारस आदि में भी मालिश का बहुत प्रचलन था। हमारे आयुर्वेद में तो मालिश को अनेक प्रकार के रोगों का इलाज बताया गया है।

पुस्तक में मालिश की कई प्रकार की विधियों पर प्रकाश डाला गया है। हम आज भी देखते हैं कि हमारे देश के नाई, मर्दन कला में बड़े निपुण होते हैं, और वे तरह तरह की मालिश की विधियों को जानते हैं।

मालिश के विशेष लाभों का जिक्र करते हुए लेखक लिखता है इससे वात संस्थान को उत्तेजना मिलती है जिससे शरीर की अन्य क्रियाएं भी ठीक से होती हैं। रक्त संचरण सुचारु रूप से होता है जिससे शरीर के विकार शरीर में इकट्ठे न होकर श्वास, प्रश्वास, पसीने व पाखाने और मूत्र द्वारा शरीर से बाहर निकल जाते हैं। इससे शरीर का पाचन यन्त्र ठीक रहता है तथा गठिया तथा स्नायु रोग इसके प्रयोग से दूर होते हैं। इसके अलावा, पुराने रोगों को ठीक करने में मालिश सहायता देती है। मालिश वास्तव में मांसपेशियों की कसरत है। इससे उनमें गति उत्पन्न होती है तथा जीवन शक्ति प्राप्त होती है।

पुस्तक में मालिश सम्बन्धी कुछ चित्र हैं और यह भी बताया गया है कि किस अवस्था में मालिश वर्जित है। चित्रों द्वारा पुस्तक में यह दर्शाया गया है कि पीठ सिर, पेट, मुख आदि की मालिश किस तरह की जानी चाहिए।

पुस्तक की सफाई छपाई सुन्दर है। प्रूफ की अशुद्धियां नगण्य हैं। पुस्तक पठनीय है।

शकुन्तलादेवी एम. ए.

केन्द्र के समाचार

केन्द्रीय आवास योजना

केन्द्रीय निर्माण और आवास मंत्रालय ने केरल और उत्तर प्रदेश को नई चालू की गई केन्द्रीय सामाजिक आवास योजना के अन्तर्गत 2 करोड़ 99 लाख रु० मंजूर किए हैं। गांवों में भूमिहीन लोगों को मकानों के लिए जमीन देने की इस योजना की घोषणा सरकार ने पिछले साल अक्टूबर में की थी। इस योजना के अन्तर्गत केन्द्र सरकार राज्य सरकारों को 100 वर्गगज के प्लाट भूमिहीनों को देने के लिए जमीन अधिग्रहण करने का पूरा खर्चा देगी।

केरल में प्रथम चरण में 960 पंचायतों में 96,000 मकानों की जमीन की व्यवस्था करने की 6 करोड़ 67 लाख रु० की योजना के लिए 2 करोड़ 73 लाख रु० स्वीकृति किए जा चुके हैं।

राज्य में लगभग एक तिहाई भूमिहीन परिवारों को जमीन देने के पहले चरण का काम इस साल नवम्बर तक पूरा हो जाने की सम्भावना है। राज्य सरकार का इन जमीनों पर श्रमदान तथा लोगों को वित्तीय सहायता से मकान बनवाने का विचार है।

उत्तरप्रदेश सरकार ने 22 जिलों में 15,608 प्लाटों की व्यवस्था करने की 25 लाख 41 हजार रु० की योजना तैयार की है। पहले चरण में प्रत्येक जिले में एक खण्ड को इस योजना के लिए चुना गया है। मंत्रालय आन्ध्रप्रदेश, बिहार, मैसूर, उड़ीसा तथा तमिलनाडु से प्राप्त योजनाओं की भी जांच कर रहा है।

ग्रामोद्योगों में उत्पादन

खादी और ग्रामोद्योगों के उत्पादन में 8 करोड़ रु० की वृद्धि हुई है। 1969-70 में एक अरब 3 करोड़ 64 लाख रु० मूल्य के उत्पादन के मुकाबले इन उद्योगों ने 1970-71 में एक अरब 11 करोड़ 23 लाख रु० के मूल्य का उत्पादन किया। ग्रामोद्योगों का उत्पादन 85 करोड़ 60 लाख रु० मूल्य का था और खादी उद्योगों का उत्पादन 25 करोड़ 63 लाख रु० मूल्य का था। इसी अवधि में इन उद्योगों की बिक्री में 9 करोड़ रु० की वृद्धि हुई। इन उद्योगों में लगभग 19 लाख लोगों को काम मिला हुआ है।

शिशु आहार

केन्द्रीय खाद्य टैक्नालाजिकल अनुसन्धान संस्थान, मैसूर ने शिशु आहार तैयार करने की नई प्रणाली निकाली है। विकासशील देशों में बच्चे को मां का दूध छोड़ने के बाद जो आहार दिया जाता है, उसमें मुख्यत: दलिया तथा दूध, मांस, मछली और अण्डों से प्रोटीनयुक्त पोषक आहारों की मात्रा नगण्य होती है। अत: सही मात्रा में प्रोटीन, विटामिन और खनिज न मिलने से कम आय वर्ग के लोगों के शिशु तथा छोटे बच्चे आमतौर पर अपोषण की बीमारियों से ग्रस्त पाए जाते हैं। दूध की मंहगाई तथा दूध प्रधान देशों से दुग्ध चूर्ण आदि सही मात्रा में न मिल पाने को ध्यान में रखते हुए देश में मौजूद दालों आदि जैसे प्रोटीन वाले भोजन से ही पौष्टिक शिशु आहार तैयार करने की आवश्यकता महसूस हुई।

केन्द्रीय खाद्य टैक्नालाजिकल अनुसन्धान संस्थान की इस नई प्रणाली से 6 महीने से 4 वर्ष तक के बच्चों के लिए प्रोटीन युक्त शिशु आहार बनाया जाएगा। संस्थान द्वारा तैयार किया गया आहार प्रोटीन युक्त है तथा इसका स्कूल जानेवाले बच्चों तथा वयस्कों के लिए सहायक आहार के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।

इस समय देश में दो फर्में शिशु आहार तैयार कर रही है। इनका वार्षिक उत्पादन कुल आवश्यकताओं से काफी कम है।

प्रतिदिन तीन टन शिशु आहार तैयार करने वाले संयन्त्र के लिए कुल 12.55 लाख रुपये की पूंजी का अनुमान लगाया गया है। एक किलो आहार के उत्पादन पर लगभग 2 रुपए 70 पैसे की लागत आएगी।

सड़क निर्माण

1971-72 के दौरान देश में 22,000 किलोमीटर लम्बी नई सड़कें बनाई गई। इन्हें मिलाकर सड़कों की कुल लम्बाई 1,25,400 किलोमीटर हो गई है। इसमें राज्य लोक निर्माण विभागों, स्थानीय संगठनों तथा सामुदायिक विकास खण्डों के अन्तर्गत बनाई गई सड़कें भी शामिल हैं।

ताजा सूचनाओं के अनुसार योजना में राजमार्गों के लिए स्वीकृत 4 अरब 18 करोड़ रु० में से केन्द्र सरकार ने राजमार्ग बनाने के लिए 2 अरब 10 करोड़ रु० के अनुमानों की स्वीकृति दे दी है। इसके अलावा लगभग 52 करोड़ रु० के अनुमान अभी विचाराधीन हैं। केन्द्रीय क्षेत्र में सड़कें बनाने के लिए अन्तिम रूप से 1971-72 में 40 करोड़ रु० से अधिक स्वीकृत किए गए।

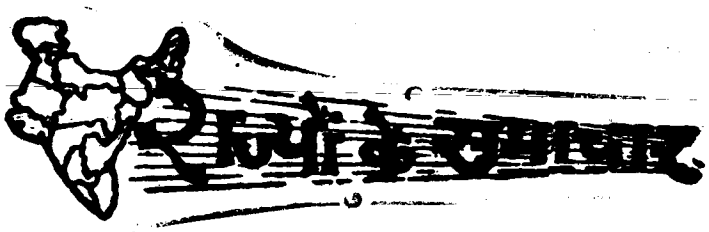

राज्यों के समाचार

उत्तर प्रदेश

पेयजल की व्यवस्था

राज्य के पांच पहाड़ी और चार पठारी जिलों में शुद्ध पेयजल की व्यवस्था करने के लिए सरकार ने लगभग 78 करोड़ रुपए की एक महायोजना बनाई है जो 1979 तक पूरी करली जाएगी। इस योजना की पूर्ति पर अलमोड़ा, नैनीताल, देहरादून, टिहरी तथा गढ़वाल जिलों के 6157 ग्रामों की 14 लाख जनसंख्या तथा झांसी हमीरपुर, बांधा और जालौन जिलों के 3282 ग्रामों की साढ़े सत्ताईस लाख जनसंख्या लाभान्वित होगी। इस योजना के अन्तर्गत इन सभी ग्रामों में नलों द्वारा शुद्ध जल पहुंचाया जाएगा। राज्य के एक लाख 12 हजार 624 ग्रामों में से 29,238 ग्रामों में पानी की हमेशा कमी रहा करती है।

रोजगार योजना

सुल्तानपुर जिले में गांव वालों को रोजगार देने के उद्देश्य से गत 2 अक्टूबर को केन्द्रीय सरकार द्वारा घोषित त्वरित कार्यक्रम के अन्तर्गत आरम्भ 78 किलो मीटर लम्बी महत्वपूर्ण संयोजक सड़कों का निर्माण कार्य 3750 रुपये की अनुमानित लागत से मार्च 1974 तक पूरा हो जाएगा।

नलकूप योजना

भारतीय जीवन बीमा निगम ने राज्य में छोटे किसानों को अपने नलकूपों के विद्युतीकरण में सहायता प्रदान करने के लिए एक नई योजना प्रारम्भ की है। यह देश में अपने किस्म की पहली योजना है जिसके अन्तर्गत नल कूप के विद्युतीकरण के लिए इच्छुक किसी भी किसान को 1,000 रुपए की एक बीमा पालिसी लेनी होगी जिससे वह अपने नलकूप के विद्युतीकरण के लिए राज्य विद्युत परिषद के पास 350 रुपए जमा कर देगा जबकि पहले उसे 500 रुपये से 750 रुपए तक जमा करने पड़ते थे।

किसानों के हित

राज्य सरकार ने राज्य में सरकार द्वारा की जाने वाली गेहूं की खरीद में अनेक गैर सरकारी व्यक्यिों को सम्मलित करने का निर्णय किया है। ये गैर सरकारी व्यक्ति उन किसानों के हितों का ध्यान रखेंगे जो गेहूं के केन्द्रों पर अपना गेहूं बेचने जाते हैं। प्रत्येक गैर सरकारी व्यक्ति को प्रतिदिन तीन रुपए मानदेय के रूप दिए जाएंगे।

ग्रामीण विद्युतीकरण

राज्य विद्युत परिषद ने 1971-72 में ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम का नया मानदण्ड प्रस्तुत किया है। इस अवधि में 30,593 निजी नलकूपों को बिजली दी गई जबकि 1970-71 में 19,359 निजी नलकूपों का ही विद्युतीकरण हुआ था।

मध्य प्रदेश

बेरोजगार इंजीनियरों को काम

राज्य के बेरोजगार तकनीकी व्यक्तियों को कृषि सेवा केन्द्र स्थापित करने के लिए प्रशिक्षण तथा सहायता देने की भारत सरकार की एक योजना के अन्तर्गत राज्य सरकार द्वारा गठित चयन समिति ने हाल में 26 और बेरोजगार इंजीनियरों का चयन किया है। इनमें से अनेक प्रत्याशी कृषक परिवार के हैं। झाबुआ से एक चुना गया प्रत्याशी भूमिहीन कुम्हार का पुत्र है। इस योजना के अन्तर्गत चुने हुए प्रत्याशियों को निःशुल्क प्रशिक्षण दिया जाएगा।

किसानों को आर्थिक सहायता

राज्य सरकार ने छोटे कृषकों को बेकार कुओं तथा प्राकृतिक प्रकोपों से धंस गए कुओं को फिर से बनाने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की है। अधूरे कुओं को पूरा करने के लिए अनुदान केवल उन कृषकों को दिया जाएगा जिनके पास साढ़े सात एकड़ से अधिक भूमि न हो एवं जिन्होंने राज्य सरकार या अन्य किसी संस्था, जैसे सहकारी बैंक या व्यवसायिक बैंक से कुओं के लिए ऋण लिया हो। इस कार्य के लिए एक लाख रुपए प्रावधान रखा गया है।

हरियाणा

सिंचाई योजना

राज्य के 75,000 गांवों में से 7,657 गांवों में पीने के पानी की व्यवस्था नहीं है। राज्य सरकार ने उनमें नलकूप लगाने का काम शुरू कर दिया है और 2,107 गांवों में नलकूप लग गए हैं।

राज्य सरकार ने सूखाग्रस्त महेन्द्रगढ़ और गुड़गांव जिले की रिवाड़ी तहसील के लिए 29 करोड़ रु० की लिफ्ट सिंचाई योजना तैयार की है जो तीन साल में पूरी हो जाएगी। इसका नाम जवाहरलाल नेहरू नहर होगा और यह सात साल एकड़

की सिंचाई करेगी।

पीने के पानी की योजनाएं

राज्य में प्रत्येक गांव में बिजली व सड़कों के बाद सरकार ने गांववासियों को पीने का पानी देने की योजना को प्राथमिकता देने का निर्णय किया है ताकि हरियाणा को एक आदर्श राज्य बनाया जा सके। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जिला जीन्द के 42 गांवों में पेयजल वितरण योजना पूर्ण हो गई है, जिसपर लगभग 82.50 लाख रुपये व्यय हुए हैं। इस योजना से 87 हजार की जनसंख्या को लाभ होगा। इसके अतिरिक्त उचाना व सफीदों में भी पेयजल वितरण योजना चालू साल में अगस्त तक पूरी हो जाएगी, जिसके लिए 73 लाख रुपए स्वीकृत किया गया है।

स्टेट बैंक की शाखा

राज्य के एक गांव में, जहां छोटी सी मंडी भी है, स्टेट बैंक ने अपनी एक शाखा खोली है। इस गांव का नाम है, डबवाली। बैंक में काफी मात्रा में लेनदेन होता है और छोटे किसान, बसों गाड़ियों के मालिक, छोटे व्यापारी तथा छोटे उद्योपति बैंक से ऋण लेते हैं।

हिमाचल प्रदेश

बहुफसली खेती

सिरमौर जिले के पौंठा ब्लाक में प्रायोगिक परियोजना के तहत बहुफसली खेती की सम्भावनाओं का अध्ययन किया जाएगा। कृषि विभाग ने जल्दी पकने और अधिक उपज देने वाली अनाज की किस्में जारी की हैं। जहां सिंचाई सुविधाएं है वहां कृषि मंत्रालय ने 1,000 प्रदर्शन करने का फैसला किया है। इस समय पहाड़ी क्षेत्रों के किसान साल में सिर्फ दो फसलें मक्का, गेहूं या धान, गेहूं लेते हैं जिससे अर्सिचित जोतों वाले किसानों को 320 रु० और सिंचित जोतों वाले किसानों को 1,000 रुपये फी एकड़ सालाना आय मिल पाती है।

झूठ और सच... (पृष्ठ 31 का शेषांश)

लाभ उठा कर घर घर यह मन्त्र फूंक दोगे कि प्रत्येक के सुःख के लिए छोटा परिवार होना ही आवश्यक है।"

"अवश्य। पर ऐसे कैसे चल दिए कुछ जलपान वगैरा।"

"बस मेरे लिए इतना ही पर्याप्त है कि तुमने मेरे ध्येय की पूर्ति में सहयोग दिया। भाभी का पूरा पूरा ध्यान रखना। जो बच्चे हैं, उनका जीवन सुन्दर बनाने का पूरा पूरा प्रयत्न करना। अब चलूं" कहकर किशन उठा और शम्भू का कन्धा थपथपाते हुए बाहर की ओर बढ़ गया।

चार वर्ष बाद किशन, शम्भू से मिलने फिर उसके घर आया। किशन की खुशी की ठिकाना न रहा, जब उसने शम्भू व उसके पूरे परिवार के सदस्यों के चहरे पर चमक देखी। फिर भी उसने पूछ ही लिया "कैसे गुजर रही है शम्भू।"

"बहुत अच्छी प्यारे। सच तेरे मन्त्र ने मेरा जीवन सुधार दिया। मैंने स्वयं तो परिवार नियोजन का लाभ उठाया ही, मित्रों को भी उसका लाभ उठाने की सलाह दी है। वास्तव में मै समझ गया कि जीवन में झूठ क्या है, सच क्या है।"

"यही सत्य यदि देश का हर मानव समझ जाए तो शक नहीं कि हर परिवार के दुःख टल जाएं। पूरे देश के दुःख टल जाएं।" कहते कहते किशन की आंख नम हो गई। वह उगते सूर्य की लालिमा को देखने लगा।

संसद में विकास चर्चा... . (पृष्ठ 29 का शेषांश)

विकास तथा पंचायतीराज सम्बन्धी एक सलाहकार परिषद का गठन किया है।

डा० लक्ष्मी नारायण पाण्डेय (सदस्य लोकसभा) द्वारा यह पूछे जाने पर कि गत तीन वर्षों में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के निष्पादन के लिए कितनी धनराशि दी गई है, बताया गया कि राष्ट्रीय विकास परिषद की समिति द्वारा 1968 में किए गए निर्णय के अनुसार चौथी योजना की अवधि में राज्यों को केन्द्रीय सहायता 'ब्लाक' अनुदानों और 'ब्लाक' ऋणों के रूप में दी जा रही है। योजना आयोग द्वारा अनुमोदित परिव्यय और वास्तविक व्यय इस प्रकार है—

वर्ष	अनुमोदित परिव्यय (करोड़ रु० में)	वास्तविक व्यय (करोड़ रु० में
1969-70	17.11	18.35
1970-71	20.34	18.35
1971-72	20.12	24.45

भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति की 25 वीं वर्षगांठ के उपलक्ष में सर्वोत्तम ग्राम पंचायत को पुरस्कार देने की योजना के विषय में श्री मार्तण्डसिंह को बताया गया कि सभी ग्राम पंचायतें पुरस्कार प्रतियोगिता में भाग लेने की पात्र हैं। चयन के मानदण्ड ये हैं: (1) ग्राम पंचायतें दलबन्दी से पर्याप्त रूप से मुक्त होनी चाहिए। (2) उनके चुनाव नियमित रूप से किए गए होने चाहिए, और (3) उनमें निहित शक्तियों के अधीन उनके द्वारा अधिकतम सम्भव मात्रा में संसाधन जुटाए गए होने चाहिए। विभिन्न स्तरों पर दिए जाने वाले पुरस्कारों का ब्यौरा इस प्रकार है :—

राष्ट्रीय स्तर

प्रथम पुरस्कार	5000 रु०
द्वितीय पुरस्कार	3000 रु०

राज्य स्तरीय

प्रथम पुरस्कार	1000 रु०
द्वितीय पुरस्कार	500 रु०
तृतीय पुरस्कार	300 रु०

केन्द्र शासित क्षेत्र स्तरीय

प्रथम पुरस्कार	1000 रु०
द्वितीय पुरस्कार	500 रु०

—राधाकान्त भारती

[आवरण पृष्ठ II का शेषांश]

की जाती हैं। इस सड़क के बन जाने से कृषि उत्पादन को बड़ा बल मिलेगा और यहां के लोगों के परिवहन की समस्या हल हो जाएगी।

पश्चिम बंगाल

पश्चिम बंगाल के बीरभूमि जिले में ग्रामीण रोजगार की क्रैश योजना के अधीन भारत सरकार द्वारा स्वीकृत 3' योजनाएं चल रही हैं। इनमें 25 सड़क परियोजनाएं, 5 बाढ़ नियन्त्रण योजनाएं और एक तालाब में मछली पालन की योजना है। इन कार्यों के लिए इस जिले को 1971-72 में 17.42 लाख रुपए दिए गए थे और इस पूरी राशि को व्यय किया जा चुका है।

इन परियोजनाओं के पूरा हो जाने पर 155 मील लम्बी ग्रामीण सड़कों का विकास हो जाएगा और इन सड़कों में नीचे ईंटें लगाकर और ऊपर से मुरम (मिट्टी) छिड़क कर उन्हें अधिक मजबूत और टिकाऊ बनाया जाएगा। लगभग 11 मील की लम्बाई में बांध बनाए जाएंगे और इससे लगभग 80,000 एकड़ में भूमि को बाढ़ से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। इसके साथ ही सिंचाई सुविधाओं का विस्तार और विकास करके इन क्षेत्रों को सघन कृषि के अन्तर्गत लाया जाएगा। ग्रामीण रोजगार की क्रैश योजना के अन्तर्गत बनाई जाने वाली सड़कों की मदद से किसान अपने खेतों के लिए बीज, खाद आदि आसानी से ला सकेंगे और अपने उत्पादन को विपणन (बिक्री) के लिए आसानी से शहर में ले जा सकेंगे।

इस समय लगभग 22,000 परिवार इन परियोजनाओं में प्रतिदिन काम कर रहे हैं, जिनमें 800 शिक्षित युवक हैं।

भूमिहीन श्रमिकों में से लगभग 25 प्रतिशत को बेकारी के महीनों में रोजगार उपलब्ध कराया गया और इससे इस वर्ष कृषि श्रमिकों में फैली असन्तोष और निराशा की भावना कम हो गई है।

बोलपुर खण्ड जहानाबाद गांव में अजय बांध के पुनर्निर्माण का कार्य चल रहा है जिसमें करीब 8,000 व्यक्ति रोज काम करते हैं और इसे श्रमिक तीर्थ स्थान मानते हैं।

मैसूर

मैसूर राज्य के कुर्ग जिले की सोमवारपेट तालुक में 1971-72 में 88 ग्रामीण संचार कार्य किए गए, 48 सिंचाई कार्य किए गए, 70 कुएं बनाए गए, स्कूलों के लिए 54 नई इमारतें बनवाई गईं और 56 पुरानी इमारतों की मरम्मत कराई गई। इन कार्यों पर कुल 7,59,683 रुपये खर्च किए गए। इन कार्यों के अलावा कृषि, पशुपालन, मछलीपालन और तालुके की अनुसूचित जातियों और आदिवासी जातियों के हितों के विकास कार्य भी हुए। स्थानीय नहर पर चन्दे से 67,500 रुपये इकट्ठे किए गए।

इसी अवधि में तालुक में ग्रामीण रोजगार की क्रैश योजना के अन्तर्गत 1,32,364 रुपये की लागत से 6 सड़कों का निर्माण किया गया।

कृषि विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 212 हैक्टेयर भूमि अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत लाई गई और मिट्टी के 18,822 नमूने परीक्षण (विश्लेषण) के लिए भेजे गए। इसके साथ ही 70 स्प्रेयर भी वितरित किए गए।

57 जोड़े हलबैल खरीदे गए जिन पर 21,000 रुपये खर्च हुए और इन्हें 57 अनुसूचित जाति के परिवारों में बांट दिया गया। 6,924 रुपये के मूल्य के उन्नत बीज, उर्वरक और कृषि औजार आदि खरीदकर अनुसूचित जन-जातियों के परिवारों में बांटे गए। अनुसूचित जातियों की दो कालोनियों में भूमि को सुधारकर खेती योग्य बनाने पर 4,895 रुपये व्यय किए गए।

सामुदायिक विकास यूनिट ने नई शिक्षा संस्थाओं को 22,500 रुपये दिए और 21 बालवाड़ियां चलाने के लिए 10,640 रुपये दिए। युवक क्लबों को कृषि उपकरण और खेल का सामान खरीदने तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करने के लिए 5,650 रुपये की राशि उपलब्ध कराई गई थी। ●

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1
द्वारा प्रकाशित तथा गंगा प्रिंटिंग प्रैस, सदर बाजार, दिल्ली-6 द्वारा मुद्रित।

Regd. No. D-28

नए तिलहन : सोयाबीन और सूरजमुखी

सोयाबीन

1971-72 में तिलहन का उत्पादन लगभग 91.37 लाख मीट्रिक टन हुआ जो इस वर्ष के निर्धारित लक्ष्य से लगभग 4 लाख मीट्रिक टन कम है।

देश में तिलहन की कमी को पूरा करने के उद्देश्य से अन्य देशों में प्रचलित किस्मों का अध्ययन किया गया और उनमें से दो किस्में सबसे उपयुक्त पाई गईं. सूरजमुखी की खेती दक्षिण भारत के लिए और सोयाबीन की खेती उत्तर भारत के लिए। 1971-72 से अब तक लगभग 4 लाख हैक्टेयर भूमि में सोयाबीन की फसल उगाई गई है और आशा है कि चौथी योजना के अन्त तक 5 लाख मीट्रिक टन उत्पादन लिया जा सकेगा।

1973-74 तक सूरजमुखी की चुनी हुई किस्मों के अन्तर्गत 3.5 लाख हैक्टेयर भूमि लाने का एक जोरदार कार्यक्रम बनाया जा रहा है और अनुमान है कि इससे 3.5 लाख मीट्रिक टन तिलहन का उत्पादन हो सकेगा।